UNIVERSAL LIBRARY
OU_182425
UNIVERSAL LIBRARY

मरदानी औरत

A Satire On the evil of the Literary world

हास्यपूर्ण और शिक्षाप्रद नाटक

रचयिता—

हास्यरस-सम्राट

श्रीयुक्त जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,

ज्ञानवापी, काशी।

चौथी बार] १९४२ [मूल्य २)

प्रकाशक—
श्री बैजनाथ केडिया
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
ज्ञानवापी, काशी।

शाखा
२०३, हरिसन रोड, कलकत्ता
दरीबा कलाँ, दिल्ली
बाँकीपुर, पटना
हास्पीटल रोड, लाहौर

मुद्रक—
रामशरणसिंह यादव
वणिक प्रेस
साक्षीविनायक काशी

दिलका गुबार

"नालये बुलबुले शैदा तो सुना हँस हँस कर।
अब जिगर थामके बैठो मेरी बारी आई॥"

यह देखिये मेरी ढिठाई। ढिठाई कहिये चाहे धृष्टता या मूर्खता कि जिनकी सभामें मैं बैठा हुआ हूं उन्हींको आज मुंह चिढ़ा रहा हूं। पानीमें रहता हूं और मगरसे बैर करने चला हूं। आगको बुझानेके लिये आग-ही-में कूद पड़ा हूँ। देखूँ, आगको मैं बुझाकर ख़ाक करता हूं कि वह जलाकर मुझीको ख़ाक करती है। अब तो ओखलीमें सर रख दिया मूसलोंका डर कैसा?

बहुत दिनोंसे हिन्दीकी दुर्दशा देखकर मेरा दिल सुलग रहा था। मगर आज यह मशालकी तरह जल रहा है। इसकी रोशनीमें देखना हो तो देख लीजिये कि हमारे साहित्य-संसारकी अन्धेरनगरीकी कैसी शोचनीय दशा है। चोर, लुटेरे और डाकू यहाँ किस तरह बेधड़क ऊधम मचा रहे हैं और आपके पहरेवाले किस मज़े से मीठी नींदमें बेख़बर पड़े सो रहे हैं।

भोले-भाले पथिकोंका इसमें गुज़र कहाँ? किसीने इसमें

घुसनेकी अगर हिम्मत भी की तो कोई ठीक राह बतानेवाला नहीं मिलता। जो मिलते भी हैं तो अन्धे और मतलबी। नतीजा यह होता है कि पथिक बेचारा भटकते-भटकते अन्तमें ऊबकर इसमेंसे भाग निकलता है या मारे भूख-प्यासके वहीं दम तोड़ देता है। क्योंकि इस अन्धेरनगरीमें साहित्य-सेवियोंको अन्न-जल देना महा जुर्म समझा जाता है।

यही कारण है कि आज बीसियों नये-नये पत्र और पत्रिकायें निकलती हैं और कल एकदम ठंढी पड़ जाती हैं। आज सैकड़ों किताबें प्रकाशित होती हैं और कल उनके कोई नाम भी नहीं लेता। उस सन्तानसे फ़ायदा ही क्या जो पैदा होते ही परलोक सिधारे? ऐसे बच्चोंसे भला कोई सन्तानवाला हुआ है? तो फिर उनपर शेख़ी और घमण्ड क्यों?

हम सम्मेलनोंमें गला फाड़-फाड़कर चिल्लाते हैं। अख़-बारोंके कालमके कालम स्याह कर डालते हैं। पाठकोंको कोसते-कोसते थक जाते हैं, तो भी हमारा साहित्य-संसार ज्यों-का-त्यों उजड़ा हुआ है। बसता हुआ नज़र नहीं आता। क्योंकि जो रोग यहाँ फैला हुआ है उसकी दवा हम नहीं करते। जो अन्धेर यहाँ मचा हुआ है उसको नहीं रोकते। जिनके मारे यह बसने नहीं पाता उनकी ख़बर नहीं लेते।

हम ज़रा ज़रासे कामके लिये देशमें लाखों रुपये दमके दममें इकट्ठा कर देते हैं, मगर अपने साहित्यके लिये एक पैसा

भी खर्च करना बेकार समझते हैं। हम यह जानते हैं कि दुनियामें कोई काम बिना रुपयेके नहीं होता, तो भी हम साहित्य-संसारको सदैव बेगार ही ले-लेकर बसानेकी कोशिश कर रहे हैं। भला यह कोशिश कभी पूरी तरहसे कामयाब भी होगी ?

पाठकों और ग्राहकोंके लिये यह कहना कि इधर लोग निगाहतक नहीं उठाते, फ़जूल है। जब खुद हमींमें दोष है तब दूसरोंको दोष क्यों दें ? जो 'पुलाव' और 'क्रीमकेक' के स्वाद ले चुके हैं उन्हें हमारी सूखी, बासी और जूठी रोटीके टुकड़ेमें भला कब मजा आ सकता है ? हाँ, हम भी अगर जमानेका रंग बदलते हुए नित नई और अनोखी चीजें अपने पकवानमें बनाना सीखें तो फिर देखिये इनपर किसकी राल नहीं टपकती ?

यों तो जो मुझको साहित्य-सुधारपर कहना था वह सब खरी-खरी सुना दिया है। अब चाहे किसीको बुरा लगे या भला, इसका कहांतक ख़याल करूँ ? और बीमारोंको तो फायदा करनेवाली दवा हमेशा कड़वी मालूम होती है।

पहले इस विषयको उपन्यासके रूपमें दिखानेका मेरा इरादा था और इसी ख़यालसे मैंने "मासिक मनोरंजन" में 'स्वामी चौखटानन्द' का सिलसिला बांधा था, मगर सम्पादकों की खींचातानीमें वह सिलसिला टूट गया। सबकी सेवामें उपस्थित होनेके उद्योगमें मैं चारों तरफ़ डांवाडोल ही रहा।

किसी सिलसिलेमें ठीक तरह जमने न पाया। तो भी इस बीचमें इस विषयपर भी मेरे लेख लगभग ४ सालसे फुटकर रूपमें भिन्न-भिन्न पत्रोंमें कभी-कभी निकलते ही रहे। उन्हीं बिखरे हुए दानोंको १९१९ में फिर बटोरा और नये सिरेसे गूंथकर यह नाटक रचा। ताकि साहित्य-संसारकी दुर्दशा स्टेजपर भी दिखलाई जा सके। और यों यह आप लोगोंके दिलपर पूरे तरहसे असर करके आपकी कृपा-दृष्टि हिन्दीकी ओर खींचे।

गोंडा
२—९—२०

—जी० पी० श्रीवास्तव

पञ्चम संशोधित संस्करण

समयके परिवर्त्तनसे जो अंश फीके पड़ चले थे, उनको निकालकर इस संस्करणमें रोचकता तथा प्रभावकी मात्रा समयानुसार और बढ़ा देने की कोशिश की गई है, ताकि इसपर आपकी कृपादृष्टि वैसी ही बनी रहे।

गंगाश्रम, गोंडा
१४—१०—४२

—जी० पी० श्रीवास्तव

पात्र

मदन—मोहनीका चाहनेवाला
दौलतराय—मदनका बाप
प्रधानजी—मोहनीका वली
सेठ नाटकचन्द—मालिक थियेट्रिकल कम्पनी
दिलजला—सत्यानाशीका मर्द
बम्भोलानाथ—बौड़म लेखक
गड़बड़—बम्भोलानाथका मसख़रा दोस्त
बण्टाधार—मूर्ख सम्पादक
पेटूलाल—पहले चूरनवाला बादको प्रकाशक
पक्षपातीलाल—समालोचक
भिखारीलाल—लाइब्रेरियन
रमचोरवा—बम्भोलानाथका नौकर

अहीर—एक गँवार
कन्हई—दिलजलाका नौकर
महरा—सुखियाका मर्द बण्टाधारका नौकर
लल्ला—दिलजलाका लड़का
थानेदार
दो कान्सटेब्ल
दो मजकूरी
टिकट कलक्टर
पोस्टमैन
ओझा
चार शोहदे
मुक़ीचन्द उधारमल
फोकटराय
छः या सात आदमी
दो या तीन लड़के

पात्री

मोहनी—मदनको प्यार करनेवाली
मालती—मोहनीकी सखी
सत्यानाशी—दिलजलाकी स्त्री

रामभोली—बंभोलानाथकी स्त्री
सुखिया—दिलजलाकी नौकरानी
सहेलियां

मरदानी औरत

पहला दृश्य

पांईबाग़

(फुलवारीमें रङ्ग-विरङ्गके फूल खिले हैं। फौवारे छूट रहे हैं। दूरपर एक महल दिखाई दे रहा है। जगह-जगह गुमटियां बनी हुई हैं। एक गुमटीमें मोहनी किताब लिये पढ़ रही है। उसीके पास मालती इधर-उधर टहल रही है। सहेलियाँ गा रही हैं। फुलवारीके सामने एक फाटक बना हुआ है।)

गाना

सहेलियाँ—

देखो गुइंयां फुलवरियामें फूल खिले हैं, क्या ही रंगीले हर रंगके।
जूही चम्पा चमेलीकी न्यारी हैं क्यारी, फूले हैं फूल सभी ढंगके।

तीसरी सहेली—शर्बत तो है, ठंढक नहीं।

चौथी सहेली—शराब तो है, नशा नहीं।

मोहनी—(उठकर) देखनेके लिये है, मगर हाथ लगानेके लिये नहीं। मिठाईके साँचोंमें ढली हैं, मगर मिट्टीकी बनी हैं।

सब सहेलियां—तभी तो आजकल इतनी सस्ती होरही हैं।

मालती—वाह! वाह! यह बात तो और भी अच्छी है कि सूरत ऐसी हो कि देखा ही करें और तलबगार न हों। शराब पीयें और गुनहगार न हों। ताकि बच्चे और स्त्रियां दोनों ही ले सकें उनका मज़ा।

मोहनी—सूरत उन्हींको देखना अच्छा, जो सीरतकी क़दर जानते हैं। शराब पीना उन्हींको वाजिब, जो नशेका मज़ा जानते हैं। दवा उनके लिये बेकार है, जो हैं बीमार नहीं।

मालती—यानी यह कि बच्चे और औरतें कविताके लिये समझदार नहीं।

मोहनी—नहीं, जो ऐसा हमको कहते हैं उन्हें खुद अक़्लसे सरोकार नहीं, नादान और होशियारकी पहचान नहीं। वरना कहां स्त्रियां और कहाँ लड़के? फिर भी लोग हम औरतोंको बच्चोंसे बत्तर समझते? हमारी आड़में साहित्यकी खूबियां छिपानेका बहाना करते? तमाशा है, पर नोचके परदारको उड़ाते हैं।

सब सहेलियां—साहित्यका खून करते हैं और उन्नति बताते हैं।

मालती—क्यों सखी, क्या सचमुच साहित्य मर्दोंकी मौरूसी जागीर नहीं है बल्कि उसमें हमलोग भी हिस्से दार हैं ?

मोहनी—चाँदको रोशनी किसने दी ?

पहली सहेली—सूर्य्यने।

मोहनी—बुलबुलको चहकना किसने सिखाया।

दूसरी सहेली—गुलाबने।

मोहनी—भँवरेको गूँजना किसने बताया ?

तीसरी सहेली—कमलने।

मोहनी—मधुमक्खीको मधु किसने दिया ?

चौथी सहेली—फूलोंने।

मोहनी—और पुरुषोंके दिलोंमें कविताके लिये नाजुक और कोमलभाव किसने उभारे ?

सब सहेलियां—हम औरतोंने।

मोहनी—बेशक, हम औरतोंने। तो क्या यह अचरजकी बात नहीं है कि जो चीज़ हमारी मददसे बने उससे हमें परहेज कराया जाये ? माना कि हम बीमार हैं, तो हमें इस योग्य बनाना चाहिये कि हम भोजनका स्वाद ले सकें, न कि

हमारी मौजूदा हालतकी खातिर अनाजका पैदा करना ही बन्द कर दिया जाये।

मालती—ओ हो! तब तो साहित्यकी शोभा हम भी बढ़ा सकती हैं। नाजुक-खयालीकी खूबियां चमका सकती हैं।

सब सहेलियाँ—क्यों नहीं? क्यों नहीं?

मोहनी—नाजुक कलायें तो नाज़नीनोंके लिये हुई हैं। नाजुक बदन हमारा। नाजुक मिज़ाज हमारा। तो नाजुक खयाल क्यों न हो हमारा।

सहेलियाँ— गाना

जागे जागे हैं भाग मेरे नयन खुले आज
देखी नाजुक कलाएँ सभी अपने हैं धन।
मेरे धनसे हुए हैं हाँ मर्द धनी, मैं तो अन्धीकी अन्धी बनी ही रही।
सभी भाव सुभावसे नारी भरी, देखो फिर भी कलाओंसे दूर रही।
जागे जागे—
निठुर पुरुष वज्र हृदय धारी, ज्ञान शून्य भाव नाशकारी,
इन दिनों उजाड़ी साहित्य की फुलवारी।
चलो री सखियाँ बिगड़ी बनायें, फुलवारियाँ रचायें शोभा बढ़ायें।
सजके धजके जोबन फबन फिरसे बने यह वन चमन।

मोहनी—सहेलियां! तुम सबकी सब साहित्यके फूलों-हीको चुना करोगी, तो यहाँके फूलोंकी फिर कौन सुध लेगा?

पहली सहेली—तारीफ़ तो जब है कि इस बाग़की भी सैर करें और उस बाग़की भी हवा खायें।

दूसरी सहेली—दिल भी ताज़ा करें और दिमाग़को भी तरक्की दें।

तीसरी सहेली—घरका काम भी देखें और साहित्यका मज़ा भी लूटें।

चौथी सहेली—तो फिर आज क्यों नहीं हर रोज़की तरह इन फूलोंको चुनती हो और गजरे बनाकर सखीको पहनाती हो?

सहेलियाँ—हाँ, हाँ, आवो चलें। आज तो फूलोंका चुनना भूल ही गये।

(सहेलियाँ फूल चुनती हुई दूर निकल जाती हैं और कुञ्जोंमें गायब हो जाती हैं)

मोहनी—क्यो मालती, तुम इतनी देरसे क्या सोच रही हो?

मालती—यही कि ऐसी भी कोई मिसाल है जिसमें नाजुक बदन और नाजुक खयाल एक साथ पाये जाते हों।

मोहनी—एक नहीं हज़ारों। विदेशी स्त्रियोंने.....

मालती—विदेशी स्त्रियोंकी बातें जाने दो। वह जो न करें, थोड़ा है।

मोहनी—अच्छा, तो फिर दूर क्यों जायें? लो इस लेखको देखो।

(किताब खोलकर देती है।)

मालती—(किताबके पृष्ठकी ओर देखकर) इसको तो मैं पढ़ चुकी हूँ। बेशक यह निहायत ही अच्छा लेख है। इसने छपते ही साहित्यिक संसारमें धूम मचा दी है। मगर इसका लिखनेवाला तुम्हारा वही प्यारा लेखक मदन है। और मदन तो मर्द है, स्त्री नहीं है।

मोहनी—हाँ, शायद नहीं है।

मालती—यह 'शायद' कैसा?

मोहनी—क्योंकि मैं मदनको नहीं जानती।

मालती—तुम और मदनको नहीं जानती?

मोहनी—हां, बिल्कुल नहीं।

मालती—तो फिर तुम कैसे उसीके ख़यालमें अवसर सुध-बुध भूली रहती हो?

मोहनी—उसके लेखोंका ख़याल करते-करते कभी उसका भी ख़याल करने लगती हूँ।

मालती—तो तुम उसको मर्द ही समझती हो न?

मोहनी—हाँ, ख़याल तो ऐसा ही करती हूँ।

मालती—फिर कैसे कहती हो कि यह लेख स्त्रीका है?

मोहनी—क्योंकि यह स्त्रीका लिखा हुआ है।

मालती—वाह! वाह! आज सखी तुम्हें क्या हो गया है कि पहेलियां बुझा रही हो।

मोहनी—बात तो सच कह रही हूँ, मगर बात ही ऐसी है कि पहेली मालूम होती है।

मालती—तुम्हारी बातोंका मतलब फिर क्या समझूं, यही कि मदन मर्द भी है और औरत भी?

मोहनी—नहीं, असल बात यह है कि यह लेख क्या बल्कि मदनके नामसे छपे हुए लेखोंमें आधे लेख एक स्त्रीके लिखे हुए होते हैं।

मालती—अगर ऐसा है तो वह स्त्री उनको अपने नामसे क्यों नहीं छपाती?

मोहनी—क्योंकि वह मदनकी भाव-रूपी आंचको खोद-खोदकर भड़काये रखना चाहती है।

मालती—यह क्योंकर?

मोहनी—आज तुम्हें इस भेदको बताती हूँ। जिस समय मदन साहित्यिक संसारमें प्रवेश करके अपनी जादू-भरी लेखनीकी करामात दिखा रहा था, अपनी अपूर्व कल्पना-शक्तिकी ज्योतिसे साहित्यके आकाशमें सूर्य्यकी तरह चमक रहा था, उस समय उसके लाखों पाठकोंमें एक स्त्री भी

उसके लेखोंको बड़े चावसे पढ़ा करती थी। इसकी तेज़ निगाहोंने उसके लेखोंसे भांपा कि मदनके कोमल भाव अभी अच्छी तरह उभड़े नहीं हैं। इसलिये उस स्त्रीने मज़ाक़के तौरपर पत्रोंहीमें मदनसे छेड़-छाड़ शुरू कर दी। मगर लोक-निन्दाके डरसे अपना नाम और अपनी स्त्री-जाति छिपाकर मदन हीके नामसे लेख भेजने लगी, ताकि यह बात मदनके सिवा कोई दूसरा समझ न सके कि किसी दूसरेका लेख है। पहिला लेख छपते ही मदनके हृदयपर बिजलीकी ठोकर-सी लगी। उसके छिपे हुए भाव चोट खातेही यकायक बाहर निकल आये। फिर तो कौतुकके आवेशमें दोनों तरफसे लेखोंका सिलसिला जारी हो गया। दो भावपूर्ण मतवाली नदियां एक दूसरेसे मिलनेके लिये पत्रोंमें ज़ोर-शोरसे गिरने लगीं। पढ़नेवाले दोनोंको एक ही नदीके सोते समझकर धोखेमें खाली वाही वाह करते रहे! मगर यह नहीं जान सके कि लेखों और गल्पोंके रूपमें एक तरहकी प्रेमकी चिट्ठियां दो तरफ़से जारी हैं।

मालती—यह तो अलिफ़लैलाकी कहानी-सी मालूम होती है। मगर यह बात समझमें नहीं आती कि बिना एक दूसरेको देखे हुए आपसमें प्रेम क्योंकर पैदा हो सकता है।

मोहनी—भला दमयन्तीने नलको पहिले कब देखा था?

मालती—मगर उसके रूपकी तारीफ़ तो सुनी थी ?

मोहनी—और यहां मदनने अपने हृदयको तो दिखला दिया है, जिसका सम्बन्ध प्रेममें रूपसे भी बढ़कर होता है।

मालती—अगर वह कुरूप हो ?

मोहनी—ख़याल तो नहीं है; क्योंकि प्रेम और सुन्दरतामें ऐसा घना सम्बन्ध है कि इतने उत्तम और कोमल भाव भद्दे और कुरूपोंमें बहुत मुश्किलसे पाये जाते हैं। और जहाँ पाये जाते हैं वहाँ उनकी बदसूरतीमें भी किसी न किसी बातकी सुन्दरता होती ही है।

मालती—अगर वह व्यभिचारी हो ? क्योंकि लेखक और कवि लोग ज्यादेतर व्यभिचारी भी होते हैं।

मोहनी—सिर्फ़ दुनियांकी नज़रोंमें; क्योंकि इन लोगोंका स्त्रियोंसे सम्बन्ध ज्यादे होता है। इसलिये लोग इन्हें व्यभिचारी समझने लगते हैं।

मालती—वाह ! वाह ! सम्बन्धहीसे तो व्यभिचार पैदा होता है। जब यह लोग स्त्रियोंके पीछे पड़े रहते हैं तो इन्हें व्यभिचारी होनेसे कौन रोक सकता है ?

मोहनी—उनका भावपूर्ण हृदय; क्योंकि जहाँ भाव वहाँ व्यभिचार कहाँ ? जहाँ व्यभिचार वहाँ भाव कहाँ ? लेखकोंका रास्ता ख़तरनाक ज़रूर होता है; क्योंकि हम

कभी इनको वेश्याके घरमें देखते हैं, कभी शराबखानेमें, कभी जुवारीके संग, कभी अवारोंके साथ। अगर वह ऐसा न करें तो उन्हें मानवी प्रकृतिका ज्ञान कहाँसे हो? लेखकोंको कल्पना-शक्ति ही नहीं चाहिये, बल्कि उसके साथ तजुरबा भी। अक्सर जो लेखक व्यभिचारमें पड़ जाते हैं वह फौरन् लेखककी पदवीसे गिर जाते हैं; क्योंकि उनके तमाम भाव उसीके साथ रफूचक्कर हो जाते हैं। उनके लेखोंमें फिर वह बात नहीं रहती। वह बिल्कुल फीके पड़ जाते हैं। जहाँ भाव दिलसे ग़ायब हुआ, फिर लेख और कविता लिखनेकी सामग्री भी जाती रही।

मालती—तो भी इन लोगोंके दिलका एतबार क्या? यह लोग कभी एकके होके नहीं रह सकते? भँवरेकी तरह आज इस कलीपर है तो कल उस कलीपर—

"भँवरा लोभी फूलका कली कली रस लेय।"

मोहनी—उसका दूसरा पद भी पढ़ो—

"काँटा लागा प्रेमका हेर फेर जिय देय॥"

यों तो फिर किसी मर्दके दिलका एतबार क्या? इन लोगोंमें यह बात तो है कि ये लोग अनुभवी और कोमल हृदयवाले होते हैं। इसलिये प्रेममें ये अपने प्रियतमको सम्पूर्ण हृदयसे पूजनेके सिवाय और कुछ जानते ही नहीं।

इनसे बढ़कर प्रेमी दुनियामें मुश्किलसे मिलते हैं। देखो आक़िल ख़ाँको, जो ज़ेबुन्निसाकी ख़ातिर देगमें उबलकर मर गया और ज़बानसे उफ़ तक नहीं की।

मालती—सखी, तुमने तो मदनको मेरे आक्षेपोंसे इतना बचाया है कि शायद वह स्त्री भी, जिसने इस लेखको लिखा है, नहीं बचा सकती।

मोहनी—क्योंकि मैं खुद भी मदनको देखना चाहती हूँ।

मालती—तारीफ़की नज़रसे या प्यारकी नज़रसे ?

मोहनी—चलो हटो ! क्या बकती हो ?

मालती—ख़ैर यह तो बताओ कि इस लेखिकाको क्या तुम जानती हो ?

मोहनी—(रुककर) हाँ, जानती हूँ।

मालती—आख़िर कौन है वह ?

मोहनी—क्योंकर कहूँ कि कौन है वह ?

मालती—अख्वाह ! यह कहिये ! आप ही छिपी रुस्तम निकलीं।

(मालती हँसती है और मोहनी शर्माकर सर नीचा कर लेती है)

(श्रीमती सत्यानाशीका आना)

सत्यानाशी—(बाग़के बाहर फाटकके पास सड़कपरसे) यह देखिये, इधर बाग़में कलोलें हो रही हैं और उधर

देश तबाह हो रहा है। ऐसी ही औरतें तो हमारी स्त्री-जातिकी जड़ खोद रही हैं।

मोहनी—अयँ ! यह कौन है ?

मालती—मान न मान मैं तेरा मिहमान। आख़िर यह है कौन और कहाँसे आ गई।

(दोनों फाटकके पास आती हैं)

सत्यानाशी—भला तुम लोगोंको कुछ अपनी स्त्रीजातिके सुधारकी भी फ़िक्र है ?

मोहनी—क्यों क्यों, ख़ैर तो है ?

सत्यानाशी—इस वक्त स्त्री-जातिके सुधारपर व्याख्यान होनेवाला है और तुम लोग कानोंमें उङ्गली डाले यहाँ चुहलें कर रही हो।

मोहनी—किसका व्याख्यान होनेवाला है ?

सत्यानाशी—श्रीमती सत्यानाशी देवीका।

मालती—किसका ?

सत्यानाशी—यानी मेरा।

मालती—पत्थर पड़े तुम्हारे व्याख्यानपर। जब औरतें गली-गली व्याख्यान देती फिरेंगी तो मरदुए क्या घर बैठे अण्डे देंगे ?

सत्यानाशी—अरी अक्लकी दुश्मनों ! अगर तुम

व्याख्यानोंको हमेशा सुनती आती तो आज इस तरहसे मूर्खताकी बातें न करतीं। तुम्हारे ही ऐसी औरतोंने स्त्री-जातिका सत्यानाश किया। स्त्रियोंकी स्वतन्त्रतामें आग लगाई। तुम्हीं लोगोंकी बदौलत यह निर्दयी पुरुष हमारे अधिकारोंको छीन बैठे।

मालती—सचमुच?

सत्यानाशी—हमारी विदेशी बहिनोंकी आँखें खुल गईं। वे अपने अधिकारके लिये लड़ीं। उन्होंने अच्छी तरह दिखला दिया कि हम औरतें पुरुषोंसे किसी बातमें कम नहीं हैं। हमारे ऊपर जो कमज़ोर होनेका क़सूर लगाया जाता है उसको भी उन्होंने ग़लत साबित कर दिया और बता दिया कि अगर हमलोग भी ख़ूब कसरत किया करें तो पुरुषोंसे कहीं अधिक बलवान हो सकती हैं।

मालती—कौन कह सकता है नहीं? यह तो ईश्वरही से ग़लती हो गई। जब स्त्री हर हालतमें पुरुषके बराबर है तो उन्होंने फ़ज़ूल आदमीके दो हिस्से किये। चाहे वह ख़ाली औरतें ही बनाते या ख़ाली मर्द।

सत्यानाशी—फिर यह कहांका इन्साफ़ है कि हमारी सारी आज़ादीपर मर्द अपना क़ब्ज़ा जमाये रहें, वह राज्य करें और हम गुलामी करें?

मोहनी—मगर श्रीमतीजी, घरका राज्य छोड़कर रेगिस्तानका क़ब्जा करना कहांकी अक्लमन्दी है ?

सत्यानाशी—इसका क्या मतलब ?

मोहनी—मतलब यही कि अगर पुरुषका अधिकार हमारी आज़ादीपर है तो हमारी हुकूमत पुरुषोंके दिलपर है। वह कौन ऐसी अक्लमन्द औरत है जो दिल ऐसा प्यारा राज्य छोड़कर वीरान रेगिस्तानको अपना राज्य बनायेगी ? पुरुष अगर बाहर राज्य करता है तो स्त्री घरमें राज्य करती है। अगर पुरुषोंकी बांहमें ताक़त है तो औरतोंकी आंखमें ताक़त है। जो वह तलवारसे काम लेता है, तो हम चितवनसे काम लेती हैं। हमारी कमजोरीमें भी हज़ार ताक़त है। श्रीमतीजी, मर्दोंकी फूटी किस्मतमें हिस्सा मत बटाओ। वह बाहर भीतर दोनों जगह गुलामी करते हैं।

सत्यानाशी—तुम्हारे ख़यालात उल्टे हैं। इन्हीं बातोंके विरुद्ध तो हमारा व्याख्यान है।

मोहनी—श्रीमतीजी, तुम व्याख्यान देवी फिरोगी तो घरका काम कौन सम्भालेगा ?

सत्यानाशी—क्या हम खानसामा हैं कि बेरा या बावरची, जो घरका काम देखें ! देशको सुधारना हमारा काम है न कि घरको।

मालती—जब घर नहीं सुधार सकती तो देश क्या सुधारोगी अपना सर ? घरका काम सम्भालने बेरा और खानसामा आयेंगे तो नौ महीनेतक पेटमें बच्चा कौन पालेगी ? बच्चेको छोड़कर बाहरका काम कैसे सम्भाला जायेगा ?

सत्यानाशी—हम कोई दायी नहीं हैं जो बच्चोंके पीछे पड़ी रहें। और असल बात तो यह है कि औरतोंको शादी करनेकी जरूरत ही नहीं। हमारी बहुतसी विदेशी बहिनें कुँवारी रहती हैं। आजादीकी कदर जानती हैं। इसीपर हमारा व्याख्यान है।

मालती—बहुत ठीक श्रीमतीजी ! बहुत ठीक ! यह कहो कि ईश्वरका कारखाना एकदम बन्द करानेके लिये तमाम औरतोंसे हड़ताल कराने जा रही हो।

सत्यानाशी—नहीं, हम मर्दोंसे अपना हक़ छीनने और उनको नीचा दिखाने जा रही हैं।

मोहनी—श्रीमती जी ! जिस डालपर चढ़ी हुई हो उसीको काटकर जब तुम नीचे गिराना चाहती हो तो क्या तुम उसीके साथ नीचे न गिरोगी ? उस हक़को लेकर क्या करोगी, किसके हवाले करोगी, जिसके लेनेकी तरकीब ऐसी निकाली है, जिसमें हक़के देनेवाले और पानेवाले दोनों ही न रहें ? औरतोंके लिये कुँवारी रहनेकी भली कही ! श्रीमतीजी

ज्यादेतर निकम्मे फल ही अपनी डालियोंपर सूखते हैं। वह कौनसी औरत है जो बिना पुरुषके अच्छी मालूम होती है? पुरुष तो स्त्रीका सिंगार है। अगर ऐसा न होता तो खूबसूरत और नौजवान विधवाओंको देखकर कोई छाती पीटकर न रोता।

सत्यानाशी—अफ़सोस, यह हिन्दुस्तानी ख़याल है। जिनकी आँखें शिक्षाने नहीं खोलीं वही ऐसा कहती हैं।

मोहनी—हम बाज़ आयीं उस शिक्षासे जो हमारी आँखोंका पानी मार दे। ईश्वर करे हमारी आँखोंपर शर्मका पर्दा हमेशा पड़ा रहे। यही एक रत्न यहाँ बच गया है जिसकी बदौलत हिन्दुस्तानका नाम चला जाता है।

सत्यानाशी—नाम चला जाता है कि इसका नामो-निशान मिटता जाता है।

मोहनी—हमारी बदौलत?

सत्यानाशी—हाँ हाँ, पर्देमें तन्दुरुस्ती गारत करने-वाली, शर्मका दम भरनेवाली, आज़ादी ख़ाकमें मिलाने-वाली औरत, तेरी बदौलत।

मोहनी—इसका सबूत?

सत्यानाशी—बस अपनी सूरत देख।

(मदनका आना)

मदन—ओ गली गली मारी फिरनेवाली मरदानी औरत, पहिले तू तो अपनी सूरत देख।

(सब स्त्रियां अचरजमें मूर्त्तियां बन जाती हैं। मोहनीके मुंहपर चांदकी रोशनी पड़ती है, जिससे वह और भी सुन्दर मालूम होती है। सत्यानाशीके मुंहपर नीली रोशनी पड़ती है जिससे वह बदसूरत मालूम होती है।)

(पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

मोहनीके महलका एक हिस्सा

(मदनके आनेके कुछ देर बाद मोहनी खिड़कीपर दिखाई देती है थोड़ी देरतक मदनको देखती है और उसकी बातोंको कुछ सुनती है। और फिर वहांसे हट जाती है। मगर मदन-को इन बातोंकी कुछ ख़बर नहीं होती है।)

मदनका आना।

मदन—या ईश्वर, आज क़िस्मत मुझे कहां ले आई? और मेरी आँखोंको अभी-अभी इनसे क्या दिखलाया? जादू था या तमाशा? यकायक जैसे बिजली चमक गयी। झलक देखते ही आँख झपक गयी। नज़र उठाकर देखने भी न पाया कि

झिझककर पलट गयी। कौन थी ? किसीसे पूछ भी न सका। दमभरके लिये वहाँ रुक भी न सका। बौखलाया हुआ आगे बढ़ता ही चला आया। मगर अब पैर उठाये नहीं उठते। जी यही चाहता है, उसे एक बार फिर देखूं ! फिर देखूं। और बराबर देखता ही रहूँ। मगर न जाने क्यों उस फुलवारीके फाटकके पास अब जानेकी हिम्मत नहीं पड़ती और न इस महलकी सड़कोंको छोड़नेको जी ही चाहता है। मदन ! सुन्दरियोंको पूजनेवाला मदन ! तूने अपने दिमाग़में सुन्दरियोंको शर्मानेवाली नेचरकी एक ख़याली तस्वीर खींच रखी थी। जिसकी धुनमें तूने कितने ही लेख लिख डाले। मगर आज इस नेचरकी तस्वीरने तेरी ख़याली तस्वीरको भी मिट्टीमें मिला दिया। अयँ !

(मोहनी पर्देके भीतर गाती है और मदन चकित होकर खिड़कीकी तरफ देखता है और फिर बड़े ध्यानसे गाना सुनता है)

गाना

मोहनी—

समझ पगं डालरे बटोही प्रेमपन्थमें।
उलझ नहीं जालमें बटोही प्रेमफन्दके।
निशा वियोग महा अंधियारी, दुखकी छाई बदरिया कारी
प्रेम नगरके मोह डगरमें मरना है अन्तमें। समझ०—

"याहि मति जानो है सहज कहे 'रघुनाथ' अति ही कठिन रीति
निपट कुढंगकी।
याहि करि काहू काहू भाँति सो न कलि पायो, कल पायो तबमन
मति रंग बहुरंगकी।
और हूं कहौं सो नेक कान देकै सुन लीजै, प्रगट कही है बात
बेदनके अंगकी।
तब कहूं प्रीति कीजै पहिले ते सीख लीजै बिछुड़न मीनकी और
मिलन पतंगकी।" समझ०—

"गुल वो गुलशनमें धरा क्या है बता अय बुलबुल,
जमा है चन्द वरक़ वह भी बिखरनेके लिये।"

मदन—अहाहा! बिल्कुल सच है।

"तब कहूं प्रीति कीजै, पहिले ते सीख लीजै, बिछुड़न मीनकी और मिलन पतंगकी।"

(मोहनी खिड़कीपर दिखायी देती है)

मोहनी—अयँ? कौन? आप हैं?

मदन—आप कौन? आप हैं?

मोहनी—माफ़ कीजियेगा, मैं आपको उस वक्त धन्यवाद दे न सकी।

मदन—माफ़ कीजियेगा, मैं आपसे उस वक्त माफी माँग न सका।

मोहनी—माफी किस बातकी ?

मदन—धन्यवाद किस बातका ?

मोहनी—आपने उस मरदानी औरतके मुक़ाबलेमें मेरी तरफदारी करके मुझपर बड़ा एहसान किया।

मदन—और मैं आप लोगोंके बीचमें ख़ाहमख़ाह दख़ल देकर क़सूरवार बना।

(मोहनीके हाथसे किताब गिर पड़ती है)

मोहनी—अरे ! मेरे हाथसे किताब छूट गयी। हाँ हाँ, तकलीफ़ न कीजिये। नौकर उठा लायेगा।

मदन—(किताब उठाकर) मुझको भी अपना नौकर ही समझिये।

(किताब उठाकर मोहनीको देता है)

मोहनी—मैं आपको किन शब्दोंमें धन्यवाद दूं ?

मदन—और मैं आपको किन शब्दोंमें धन्यवाद दूं ?

मोहनी—आपने तो मुझपर अनुग्रह किया। आप मेरे धन्यवादके भागी हुए। मगर आपके साथ मैंने कौन-सा ऐसा काम किया जो धन्यवाद देते हैं ?

मदन—आपने अपनी सेवा करनेका अवसर देकर इस सेवकपर क्या कुछ कम अनुग्रह किया ?

मोहनी—क्यों आप मुझे शर्माते हैं ?

(मदन जाना चाहता है। वैसे ही मोहनीके हाथसे फिर किताब गिर पड़ती है।)

मोहनी—अरे ! मेरी किताब फिर गिर गयी।

मदन—(पलटकर) आपके नौकरके भाग्यसे।

(मदन किताब उठाता है। इस दफे खुली हुई किताब होनेकी वजहसे मदन उस पृष्ठको देखता ही रह जाता है।)

मदन—(अलग) मुझे बराबर अचरजमें डाले रहनेवाला इसमें भी वैसा ही लेख है। मगर इसमें शुद्धियां पेन्सिलसे किसने कर रखी हैं। यह शुद्धियाँ सिवाय इसकी असली लेखिकाके दूसरा कोई कर ही नहीं सकता।

मोहनी—क्यों, क्या सोचने लगे ?

मदन—(किताब देता हुआ) मैं एक बात आपसे पूछ सकता हूँ ?

मोहनी—कौन-सी बात ?

मदन—क्या आप मुझे बता सकती हैं कि इस लेखकी लेखिका कौन हैं ?

मोहनी—अयँ ! क्या ? लेखिका ? इस पत्रिकामें तो किसी स्त्रीका लेख नहीं है। इसमें सभी लिखनेवाले मर्द ही मालूम होते हैं।

मदन—हां, देखनेमें तो ऐसा ही है। मगर उनमें एक स्त्री मरदानी पोशाकमें छिपी हुई है।

मोहनी—आपने क्योंकर पहचाना कि इसकी लिखनेवाली औरत ही है ?

मदन—जिस तरहसे Dickens ने George Eliot को पहचाना था।

मोहनी—तो आप विश्वास करते हैं कि वह स्त्री है ?

मदन—मैं विश्वास ही करता हूँ, मगर आप तो उसको अच्छी तरहसे जानती भी हैं। वरना मैं आपसे क्यों पूछता ?

मोहनी—मैं उसे जानती हूँ ? यह कैसे जाना आपने ?

मदन—इस लेखकी शुद्धियां साफ़ बता रही हैं।

मोहनी—छपाईकी ग़लतियाँ तो सभी सुधार सकते हैं।

मदन—मगर चरित्रोंकी बातोंको सब नहीं सुधार सकते। इसमें कुछ शब्द सम्पादकजीने भाषा और व्याकरणके नशेमें बदल दिये थे, जो बेमेल होकर कानोंमें खटकते थे, उन्हींको लेखिकाने फिर काटकर अपने ही शब्द रखे हैं।

(मोहनी नज़र नीची किये हुए उँगलियोंके नाखून देखती है, और देखती देखती यकायक खिड़की बन्द कर देती है। फिर थोड़ा-सा खोलकर झाँकती है। मदन सर झुकाये सोचमें टहलता है और उसी धुनमें चला जाता है। मोहनी फिर खिड़की खोलती है।)

मोहनी—अरे चले गये! मैं नाम भी पूछ न सकी। आखिर नाम पूछकर क्या करती? तुम्हारी बातचीत, चाल-ढाल, सोच, हिचकिचाहट और यह परेशानी तो मेरे शक-को विश्वासके रूपमें बदल रही है। फिर भी तुम्हारे मुंहसे तुम्हारा नाम सुन लेती तो अच्छा था। क्या तुम अपनी बातका जवाब न पाकर रूठकर चल दिये? या इस लेखने तुम्हें इतना परेशान कर दिया कि जवाब पानेका इन्तज़ार न कर सके? तुम्हारी बातका जवाब सिवाय चुप रहनेके और क्या देती?

गाना

हाय! तड़पत है राम! मोरा काहे जिया।
मन मुरझाय गयो, तन कुम्हलाय गयो, चितवनका वार
भयो जियरा।
"ए विधना यह कीन्हो कहा अरे मो मन प्रेम उमंग भरी क्यों?
प्रेम उमंग भरी तो भरी पर एतो सरूप दिये तैं हरी क्यों?
एते सरूप दियो तो दियो, पर एति अदाह तैं आनि धरी क्यों?
एती अदाह धरी तो धरी पर ये अंखियां रिझिवार करी क्यों?
जिया डगमग डगमग डगमगात हिया छटपटात कुछ न सुहात
रंग रसिया।
दिल धड़कत है मन लरजत है चित डोलत है दिन रतियां।

फड़कत हैं अंखियां तड़पत है छतियां किससे कहूँ बतियां हंसेगी सब सखियां।

कौन पापीने कीन्ही मोरी ऐसी दशा। हाय!

(पर्दा गिरता है)

तीसरादृश्य

दिलजलाका मकान

(दिलजलाका आना)

दिल०—हम तेरी नौकरीकी! सुबहसे शामतक काम करते करते जान निकल गयी, बुरा हो इस बड़े बाबूका। उसकी तबियत अब भी नहीं भरी। तीन गदहोंका बोझ कमबख्तने चलते-चलते मेरे सरपर लाद ही दिया। चलो रातभरका फैसला हो गया। बस, चौबीसों घण्टे पीसा करो। हरे ईश्वर...

(सुखियाका आना और दालान बुहारना)

दिल०—अरे सुखिया, बेदम हो रहा हूं, कुछ जल खानेको है?

सुखिया—(बुहारती हुई) चुपचाप ठण्ढी ठण्ढी हवा खाइये।

दिल०—अरी कमबख्त, तू हमेशा यही जवाब दिया करती है। एक रोज तो सीधी तरह बोलती। ला खाली पानी ही ला।

सुखिया—घड़ा फूट गया है। जाइये, बाहर बम्बेसे पी आइये।

दिल०—तो घड़ा मँगानेको नहीं था ?

सुखिया—लाती कहाँसे, श्रीमतीजीने सब पैसोंके टिकट और काग़ज़ मँगा लिये।

दिल०—अयँ, टिकट और काग़ज़ मँगानेकी क्या ज़रूरत थी ?

सुखिया—उन्हें लेख लिखकर भेजना था।

दिल०—आजिज़ हूँ, स्त्री नहीं कम्बख्त किसी पबलिशिङ्ग आफ़िसकी डिसपैचर है। लल्ला कहाँ है ?

सुखिया—भूखके मारे रोते-रोते सो गया है।

दिल०—क्या ? आज घरमें रोटी-ऊटी कुछ नहीं बनी है?

सुखिया—चूल्हा फूँकिये तो सब कुछ बने, श्रीमतीजीको छुट्टी नहीं जो चूल्हेके पास जायँ।

दिल०—कहाँकी डिप्टीकलक्टरी मिल गयी है उन्हें, जो फ़ुरसत नहीं है ? दिनभर क्या करती रहीं ?

सुखिया—लेक्चर देने गई थीं और अब इस वक्त कोठे-

पर कविता लिख रही हैं।

दिल०—लड़केकी कुछ ख़बर नहीं। मेरी कुछ फिक्र नहीं। वाह! वाह! अच्छे वक्त कविताईकी सूझी है कालिदासके वारिसोंमें अब यही रह गई हैं न!

(जाता है)

(पर्दा उठता है)

चौथादृश्य

दिलजलाके मकानका ऊपरी हिस्सा

(श्रीमती सत्यानाशी देवी मेज़के पास कुर्सीपर बैठी हुईं कविता लिखनेकी धुनमें नज़र आती हैं। कुछ देर बाद दिलजला बकता हुआ आता है।)

सत्या०—किताबें हैं जो पिङ्गलकी, मेरी गलती सुधारेंगी।
रहेंगे ऐब फिर भी तो खड़ी बोली सम्भालेगी।

वाह! वाह! बैठ गया। और ख़ूब बैठा। वाह रे मैं, और वाहरी मेरी कविता! (फिर पढ़ती है-किताबें हैं…।)

मगर उहुँक! कुछ-न-कुछ कसर अभी है। पिङ्गलके क़ायदेसे तो यह पद बैठ जाना चाहिये। मगर कानोंमें कुछ सूना मालूम होता है।

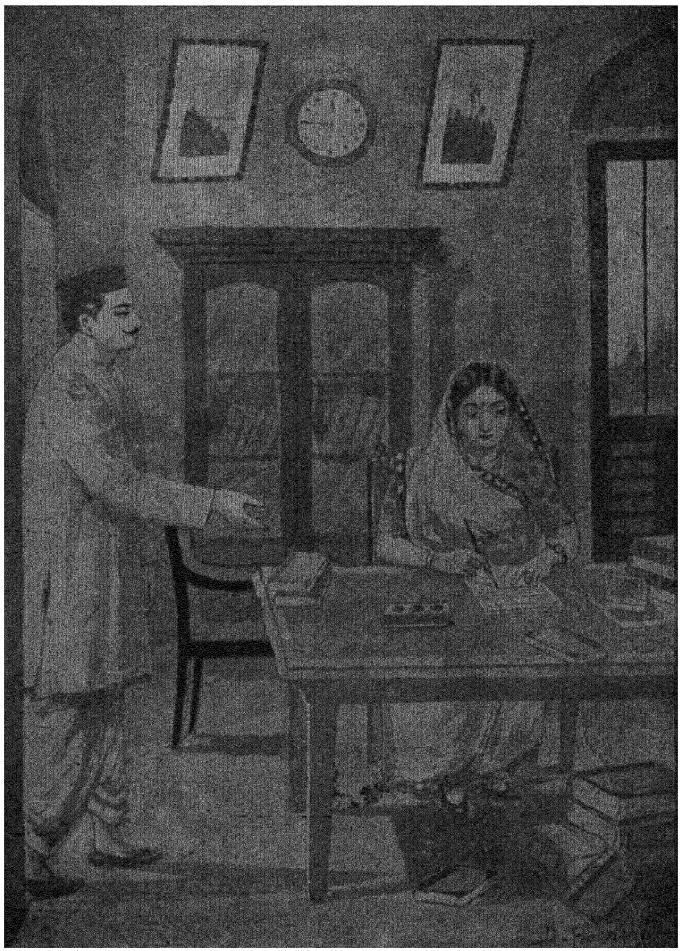

सत्या०—उफ़ ! उफ़ ! जहाँ दिन-रात ऐसे अश्लील शब्द सुननेको मिलते हैं वहाँ भला कोई स्त्री साहित्यमें कैसे उन्नति कर सकती है ?

[पृ० २९

(दिलजला आता है)

दिल०—घर नहीं भाड़ है। चौखटके भीतर पैर रखते ही सारे बदनमें आग लग जाती है।

सत्या०—अयँ ! अयँ ! कौन गुल मचा रहा है ? आप हैं ? यहाँ क्या करने आये आप ?

दिल०—क्या करने आये ? झक मारने आये। और क्या करने आये ?

सत्या०—उफ ! उफ ! जहाँ दिन-रात ऐसे अश्लील शब्द सुननेको मिलते हैं वहाँ भला कोई स्त्री साहित्यमें कैसे उन्नति कर सकती है ?

दिल०—अजी साहित्यकी उन्नति गयी अपनी ऐसी तैसीमें, मुझे इस वक्त कुछ खानेको खिलवाती हैं आप ?

सत्या०—क्या आपने मुझे अपना भण्डारी समझ रखा है ?

दिल०—नहीं जनाब, आप भूखों मारनेवाली हैं। आफत मचानेवाली हैं, मुसीबत बढ़ानेवाली हैं, जहन्नुम पहुँचानेवाली हैं। और कहूँ ? राम ! राम ! भण्डारी ही रखना था तो शादी काहेके लिये करता ? लोगोंने मुझसे यही कहा था कि खाने-पीनेका आराम चाहते हो तो शादी जरूर करो। क्यों साहब, जिस बेचारेके पास इतने रुपये न हों कि वह भण्डारी रखे वह तो मरा ?

सत्या०—फिर महाजन किस लिये बने हैं ?

दिल०—तो क्या आपकी यह राय है कि कर्जा लूँ और जेलखाने जाऊँ ?

सत्या०—वहाँ तो पकापकाया खाना मिलता है।

दिल०—बस बस, ज़बान रोकिये अपनी। अच्छी स्त्री मिली हैं। पकापकाया खाना खिलानेके लिये मियाँको जेल-खाने भिजवाती हैं।

सत्या०—नहीं, मैं आपको दलीलोंसे दिखा देना चाहती हूँ कि महाजनोंका कोई हक़ नहीं है कि रुपयोंको, जो जरूरी कामोंको पूरा करनेके लिये होते हैं, ज़मीनके भीतर फ़जूल गाड़कर रखें।

दिल०—हाय ! अफसोस ! आपसे बहस करनेके लिये कहांसे इतना बड़ा बैरिस्टर लाऊँ ? बुरा हो अखबारवालोंका, जिन्होंने मेरा दिमाग खानेके लिये मेरी भोलीभाली स्त्रीको एकदम पालीटिशियन बना दिया।

सत्या०—बस जनाब, मेरे पास इतना वक्त नहीं है कि फ़जूल आपसे बकबक करूँ। सम्पादक बण्टाधारजीके दो खत आ चुके हैं कि जल्दी कविता भेजो।

दिल०—सम्पादक बण्टाधारजी क्या कोई आपके रिश्ते-दार हैं ?

सत्या०—नहीं तो। क्यों ?

दिल०—इसलिये कि लड़केका आपको कुछ ख़याल नहीं, जो तीन घण्टे लगातार आपके कानके पास चिल्लाता रहा। मेरी आपको कुछ फिक्र नहीं, जो साढ़े पाँच फीटका लम्बा-चौड़ा शरीर लिये आपकी दोनों आँखोंके सामने खड़ा हूँ। अगर आपको दुनियामें किसीकी फिक्र है तो संपादक बण्टाधारजीकी या उनके दो खतोंकी।

सत्या०—बेशक, क्योंकि मैं साहित्यकी सेवा करना चाहती हूँ।

दिल०—तो यह कहिये कि आप पतिवर्ता नहीं कोरी साहित्यवर्ता हैं। आप करें साहित्यकी सेवा और मैं करूँ दफ़रकी सेवा। मेरी फिर सेवा कौन करे।

सत्या०—मैं क्या जानूं ?

दिल०—मेरी तनख़ाह तो कौड़ी-कौड़ी हिसाब करके ले लेती हैं। अब इस वक्त कहती हैं कि मैं क्या जानूं ?

सत्या०—नौकर रखिये।

दिल०—दीजिये रुपये, एक नहीं पाँच पाँच रखूँ।

सत्या०—माफ़ कीजिये। उस रक़ममेंसे एक कौड़ी भी नहीं मिल सकती। उतनेमें खुद गुज़र नहीं होता। पाँच अख़बार नये और निकले हैं उनको मँगानेके लिये २५) की

मुझे अब जरूरत है।

दिल०—तो मैं क्या करूं ?

सत्या०—आपको जनाब २५) देने पड़ेंगे। जहाँसे हो सके वहाँसे।

दिल०—हाय ग़ज़ब ! मैं मुसीबतका मारा ग़रीब आदमी २५) तनख़ाहसे फ़ाज़िल कहाँसे लाऊँ ?

सत्या०—जब स्त्रीका ख़र्चा नहीं उठा सकते तो शादी क्यों की ? क्यों जनाब, जब आप खुद मुसीबतमें फँसे हुए थे तो आपको क्या हक़ हासिल था कि शादी करके दूसरेको भी मुसीबतमें घसीटें ?

दिल०—तब मुझे क्या मालूम था कि पाँच पाँच अख़बार एक साथ निकल पड़ेंगे और सारी दुनियाका रद्दी काग़ज़ जमा करनेका ठेका आप ले लेंगी ? कुछ पूछो न, आपके ख़यालके मुताबिक़ बेचारे ग़रीबोंके लिये शादी करना गोया जुर्म है। या ईश्वर ! क्या तूने स्त्रियाँ सिर्फ़ अमीरोंहीके लिये बनायी हैं ?

(सुखियाका आना)

सुखिया—ए बाबूजी, ज़रा आप यहाँसे हट जाइये।

दिल०—काहेको हट जाऊँ ?

सुखिया—आप तो अजीब आदमी मालूम होते हैं।

जरा अक्लसे सरोकार नहीं रखते, न मौका समझें न महल। झट हुज्जत करनेके लिये तैय्यार।

दिल०—अरे तो साफ़-साफ़ क्यों नहीं कहतीं यह कि कोई पर्देवाली मिलने आयी है, मैं चुपकेसे हट जाता। अच्छा तो अब सही, मैं टला जाता हूँ। आप तो ज़रा ज़रा-सी बातोंमें फ़जूल बिगड़ जाती हैं (अलग) सबके घर औरतें पर्देमें रहती हैं और हमारे घर मर्दुए। जब देखो तब चलो पर्देके भीतर।

(जाता है)

(दूसरी तरफसे सम्पादक बण्टाधारका आना)

सत्या०—ओ हो! सम्पादक बण्टाधारजी हैं। नमस्कार आइये आपहीकी आज्ञाका पालन कर रही हूँ मैं। क्योंकि आज भी सुबहको आपका आदमी पत्र लेकर आया था।

बण्टा०—(कुर्सीपर बैठकर) जी नहीं, वह पत्र आपकी नौकरनीको हम ही दे गये थे। क्योंकि जो ग्राहक पुलिङ्ग होते हैं उनके पाश आदमी जाता है। और जो आप शरीखे स्त्रीलिङ्ग होती हैं उनके पास हम स्वयं उपस्थित होते हैं।

सत्या०—यह हमारी स्त्री-जातिपर आपका बड़ा अनुग्रह है।

(बण्टाधार जल्दीसे कुर्सीसे उठ खड़ा होता है)

सुखिया--(अलग) अरररर ! यह क्यों तनमनाके उठ खड़े हुए ! क्या कुर्सीपर सूई रखी हुई थी या आलपीन ?

(सुखिया पीछेसे कुर्सी हटाकर अलग ले जाती है और उसको देखती है)

सुखिया--कुछ भी तो नहीं है।

(कुर्सी वहीं छोड़कर चल देती है)

सत्या०--क्या हुआ ?

बण्टा०--बड़ा भारी अपराध हुआ।

सत्या०--किससे ? मुझसे ?

बण्टा०--नहीं, इस अधम शरीरशे। हम आपको प्रणाम करना भूल गये। देवीजी क्षमा कीजियेगा।

सत्या०--आह ! कोई हर्ज नहीं।

बण्टा०--अच्छा, तो दया करके अब हमारा प्रणाम स्वीकार कर लीजिये। प्रणाम नम्बर १,...प्रणाम नम्बर २,... प्रणाम नम्बर ३,...प्रणाम नम्बर ४,...प्रणाम नम्बर ५,...

(सत्यानाशी देवी उठ-उठकर सम्पादक बण्टाधारके प्रणामका जवाब देती हैं) . . .

बश ५ दफे हो गया। भूली हुई बातको याद पड़ते ही पाँच दफे कर लेना चाहिये। जिशशे फिर कभी न भूले।

(बण्टाधार बिना पीछे देखे हुए बैठता है, मगर कुर्सी न होनेकी

वजहसे धड़ामसे गिरता है।)

बण्टा०—अर-र-र-र-र! हम पाताल लोकको चले और प्राण आकाशको।

सत्या०—अरे! (उठकर बण्टाधारका हाथ पकड़कर उठाती है)

बण्टा०—(सर उठाकर) ओ हो! पृथ्वीकी रोक न होती तो हम अवश्य ही शीधे पातालपुरीको पहुँच जाते।

सत्या०—(बण्टाधारको उठाकर) चोट तो नहीं लगी?

बण्टा०—ईश्वर जाने। परन्तु इश शमय बड़ा आनन्द प्राप्त हो रहा है। तनिक इश हाथको भी अपने कर-कमलोंसे श्पर्शकर लीजिये।

सत्या०—अच्छा देखिये। कृपया सम्हलकर बैठिये। फिर न गिरियेगा कहीं।

बण्टा०—नहीं गिरे कब थे भला हम? वह तो हमने आपको शष्टांग प्रणाम किया था। अभी अभ्याश नहीं है। इस कारण मुँह तनिक उलटा हो गया था। बश!

सत्या०—ओहो! बड़ी तकलीफ उठाई आपने। इसके लिये मैं आपको दिलसे धन्यवाद देती हूँ। हाँ, कहिये आपकी 'नवीन पत्रिका' कब छपने जायेगी? मैं उसके लिये कविता तैयार कर रही हूँ।

बण्टा०—ओहो धन्यभाग्य! आपकी कविता तो प्रथम

अङ्कमें अवश्य ही होनी चाहिये। कविता न हो शके तो कोई लेख ही हो। हो कुछ न कुछ अवश्य, जिशशे हमारी पत्रिका-का गौरव बढ़े कि इशमें शाक्षात् देवियोंके लेख प्रकाशित होते हैं। आप अपनी कविता अथवा लेख शीधे प्रेशको कल शवेरेकी डाकशे अवश्य भेज दीजिये, जहां हमारी पत्रिका छपनेके लिये भेजी गयी है।

सत्या०—अयँ, क्या मैटर प्रेसको भेज दिया आपने ?

बण्टा०—हां, आज ही भेजा है। परन्तु कुछ चिन्ता न कीजिये। हम प्रेशको पत्र लिख भेजेंगे कि आपकी कविताको भी इशी अङ्कमें उचित श्थान दें। परन्तु शीघ्र ग्राहिका होकर अपना ग्राहक नम्बर उशमें अवश्य लिख दीजियेगा। क्योंकि हमारी पत्रिकाका उद्देश्य यही है कि उशमें केवल ग्राहिकाओंके लेख प्रकाशित हों।

सत्या०—यह आपने बड़ा अच्छा किया। हमारी सब बहिनोंको चाहिये कि ऐसी पत्रिकाकी ग्राहिका होकर लेखिका होनेका सौभाग्य प्राप्त करें।

बण्टा०—और शौ रुपयेशे अधिक दान देकर मान्य ग्राहिका होनेका अवशर प्राप्त करें। हम अपने प्रत्येक मान्य ग्राहिकाओंके टाइटिलपर नाम और चित्र प्रकाशित करेंगे।

सत्या०—तब तो बण्टाधारजी, मेरा भी चित्र इसी

अङ्कमें प्रकाशित कर दीजिये। मैं आपकी मान्य ग्राहिका ज़रूर ज़रूर हूँगी। मेरे पास इस वक्त सिर्फ ५०) रुपयेका नोट है। (बकस खोलकर निकालकर देती है) तबतक इसे स्वीकार कीजिये। जैसे ही पत्रिकामें अपनी कविता और चित्र देखूंगी वैसे ही फौरन ५०) और दूंगी।

बण्टा०—धन्यवाद ! मेरा आना शफल हो गया।

सत्या०—क्या करूं, ऐसे अभागेके पाले पड़ी हूँ कि ऐसे नेक कामोंमें रुपये खर्च करनेके लिये हमेशा तरसती ही रहती हूँ। मगर ऐसा न हो कहीं कि मेरी कविता और आपका पत्र पहुंचनेके पहिले ही पत्रिका छप जाये।

बण्टा०—इशका कुछ खटका न कीजिये। प्रेशवाले हम-लोगोंशे भी अधिक शीघ्रगामी हैं। हम आजको तारीखमें निकलनेवाले अङ्कको एक बरश बाद प्रकाशित करनेका प्रयत्न करते हैं तो हमारे प्रेशवाले उसे तीन बरशके बाद छापकर तय्यार करते हैं।

सत्या०—स्त्रियों हीके लेख जब छपेंगे तभी स्त्रियोंको फ़ायदा पहुंच सकता है।

बण्टा०—शही है, और हमारी पत्रिका तो इशलिये निकाली गयी है कि स्त्रियोंको श्वतन्त्रता और उनको पुरुषोंशे अधिकार दिलाया जाये।

सत्या०—तब तो मैं ऐसी पत्रिकाकी तन-मन-धनसे सेवा करूंगी।

(दिलजलाका चुपके-चुपके आना)

दिल०—(अलग) अररर! यह किस जेण्डरका पर्दे-नशीन है? इन्हींके लिये मैं यहांसे हटाया गया था?

बण्टा०—(दिलजलाको बिना देखे हुए) जब भारतवर्षके घर-घरमें आप शरीखे स्त्रियां होंगी तभी देशका उद्धार होगा।

दिल०—(अलग) जी हां, जिसमें हर घरमें इनका ठिकाना लग जाये। हमलोग डांटे जायें, दुतकारे जायें और आदर पावें इनके ऐसे मुछन्दर।

सत्या०—(दिलजलाको बिना देखे हुए) आप ऐसे पुरुष धन्य हैं जिन्होंने हम अबलाओंके हाथ पकड़े हैं। अब हम-लोगोंको भी चाहिये कि हम आपके लिये जान दें। आप हमारा साथ देंगे तो हम भी आपका साथ देंगी।

दिल०—(आगे बढ़कर) और मैं कहां गया? हर्गिज नहीं। ऐसा कभी नहीं हो सकता।

(बण्टाधार घबड़ाकर कुर्सीपरसे उठता है। उसपर दनसे दिलजला बैठ जाता है।)

बण्टा०—(जानेका इरादा करते हुए) अच्छा देवीजी, अब आज्ञा हो।

दिल०—ठहरिये बताता हूं।

सत्या०—(दिलजलासे) अयं, यह कैसी बदतमीजी ?

दिल०—ठहरिये बताता हूं। (बण्टाधारसे) क्यों, जनाब आप बिना मेरी इजाजतके यहां क्यों आये ?

सत्या०—(दिलजलासे) और आप यहां बिना मुझसे पूछे हुए क्यों आये ?

दिल०—मैं इनसे पूछता हूं।

सत्या०—और मैं आपसे पूछती हूं।

बण्टा०—आप लोग न झगड़िये। देवीजी शाहित्यशेवी हैं और हम शम्पादक हैं इशी लिये—

दिल०—वाह ! वाह ! आप सम्पादक क्या हुए कि उसीके साथ ख्वाजासरा भी हो गये ? घर-घर औरतोंमें घुसने लगे। बोलिये जनाब,जरा बताइये तो, आप यहां आये क्यों ?

सत्या०—आप अपनी कहिये, आप यहां क्यों आये ?

दिल०—जरा आप मुझे इनसे निपट लेने दीजिये। फिर आप मुझसे इतमीनानसे निपटती रहियेगा।

सत्या०—मगर आप इनसे पूछताछ करनेवाले कौन होते हैं ? यह आपसे नहीं मुझसे मिलने आये थे।

दिल०—आपसे मिलने आये थे ?

सत्या०—बेशक।

दिल०—क्यों ? आखिर आपसे मिलनेकी इन्हें जरूरत ? क्या आप इनके बापकी औरत हैं जो यह आपसे मिलने आये ?

सत्या०—उफ़ ! यह खुल्लमखुल्ला गालियां !

बण्टा०—हरे कृष्ण ! हरे कृष्ण ! भारतमें यदि स्त्रियां अपने अधिकारको शमझतीं तो आज कोई पुरुष किशी स्त्रीके शामने ऐसे कटुबचन मुंहशे न निकालता।

दिल०—बश ! बश ! शपाटूलाल ! खैरियत इसीमें है कि आप यहांसे फौरन चले जाइये।

सत्या०—आप अपनी खैरियत चाहते हैं तो यहांसे चले जाइये।

दिल०—अयँ ! अयँ ! मैं आपका मर्द हूं या यह ?

(सुखियाका आना)

सुखिया—अय है ! कौन बड़ा मर्द बनके आया है ? ज़रा मैं भी तो देखूं।

दिल०—(बण्टाधारकी तरफ) यह ! यह ! यह !

सत्या०—(दिलजलाकी तरफ) नहीं, यह ! यह ! यह !

सुखिया—हां, देखनेमें तो दोनों ही मर्द मालूम होते हैं, मगर दोनोंमें जो जीते उसीको असली मर्द समझिये।

बण्टा०—(अलग) अब लीजिये। यह शुशरी तो कुश्ती लड़ानेका प्रबन्ध कर रही है। बश, अब खशकना चाहिये।

(प्रकट) देवीजी अब आज्ञा है न ?

दिल०—अयँ अयँ ! फिर देवीजी। फिर देवीजी। आप अपने आप न जायँगे यहाँसे ? सुखिया, आपको घरके बाहर-तक पहुँचा आओ।

सत्या०—सुखिया, देखती क्या है ? (दिलजलाकी तरफ इशारा करके) इनको घरसे बाहर कर आओ।

दिल०—मुझको ?

सत्या०—जी हाँ, आपको।

दिल०—यह अच्छा तमाशा है। मैं निकालूँ दूसरोंको और निकलवाया जाऊँ उलटे मैं खुद ही। देखूँ तो मुझे कौन निकालता है।

सत्या०—मैं भी देखती हूँ, आप कैसे नहीं निकलते हैं। सुखिया जाकर ज़रा पुलिसको बुला ला, इनका दिमाग खराब हो गया है।

सुखिया—हो गया होगा। मर्दोंके दिमागका कौन एतबार ?

(सुखिया जाती है)

बण्टा०—(अलग) पुलिश ! बाप रे बाप (प्रकट) उफ़ ! ऐशा कलह ? हमारी देवियोंका कोई दोष नहीं है। शारा अप-राध मर्दोंहीका है। ऐशे ही गृहमें चण्डाल परवेश करते हैं।

दिल०—परवेश करते हैं कि सरीहन प्रवेश किये हुए है।

और ऐसा कि कम्बख्त निकालेसे नहीं निकलता।

बण्टा०—राम राम, ऐशे गृहमें तनिक देर भी नहीं ठहर शकते। देवीजी, अब क्षमा कीजिये। (जाता है)

सत्या०—बेशक, ऐसे घरमें किसी भलेमानुसका दमभर भी गुजर नहीं। मैं ऐसे घरपर झाड़ू फेरती हूं।

(जाती है)

दिल०—तो मैं किससे कम हूं। मैं भी ऐसे घरपर लात मारता हूं। (जाता हुआ कुर्सीसे टकराता है) उफ़! तुम-लोग भी जाओ जहन्नुमको। (कुर्सियोंको इधर-उधर फेंककर जाता है)

(पर्दा गिरता है)

पांचवां दृश्य

सड़क

(पेटूलाल चूरनवालेका आना)

गाना

पेटू०—देखोजी मैं दिल्लीका हूँ चूरनवाला।
दर दर फिरनेवाला पैसा ठगनेवाला॥
चूरन आला क्या निराला जिसमें डाला खूब मसाला काला काला
दौड़ो बच्चो छैल चिकनियां चूरन बढ़ियां पैसे पुड़िया बेंचे दिल्लीवाला।

(बण्टाधारका तेजीके साथ आना)

पेटू०—अरे ! कौन बण्टाधरवा ? तू है ?

बण्टा०—शावधान ! तू तुकार मत कर ! क्योंकि अब हम शम्पादक महाशय बण्टाधारजी हैं।

पेटू०—क्या लम्पट ! अरे यह तुम्हारे लिये कोई नयी बात थोड़े ही है। धूर्त तो पहिले थे अब लम्पट हो गये होगे।

बण्टा०—अरे मूर्ख लम्पट नहीं—

पेटू०—हाँ हाँ चोर सही मतलब वही है। चोर नहीं होते तो इतनी लम्बी धोती कहाँसे पहिननेको पाते ? यह पगड़ी कहाँसे लाते ?

बण्टा०—अयँ ! अयँ ! तुम हमको चोर कहते हो ?

पेटू०—तो झूठ क्या कहते हैं यार ? हम तुम दोनों स्टेशन-पर कुली थे कि नहीं ? वहाँ तुमने एक मुसाफिरकी गठरी नहीं चुरायी थी ? तब तुम्हारे साथ हम भी निकाले गये थे।

बण्टा०—अरे यह तो पूर्वजन्मकी बातें कहते हो, उशके बाद हम एक छापाखानेमें नौकर हुए। वहाँ बेलन चलाते-चलाते वर्णमालाके शब अक्षर पहचान लिये। फिर क्या था ? योग्यता बलबला उठी। बश झट नौकरी छोड़ मातृभाषाकी कोखमें जन्म लिया और दनशे शम्पादक बन बैठे। और तुम अपनेको जानते हो कि तुम क्या हो ?

पेटू०—अरे पहिले कुली थे अब चूरनवाले हैं।

बण्टा०—नहीं जी, तुम कवि हो कवि।

पेटू०—हम कवि हैं ?

बण्टा०—हाँ हाँ, तुम कवि हो। अभी तुम क्या गा रहे थे ?

पेटू०—चूरनका लटका। सुनो—

"देखोजी मैं दिल्लीका हूं चूरनवाला।"

बण्टा०—हाँ हाँ, यही यही। इशीको हम लोग खड़ी बोलीकी कविता कहते हैं।

पेटू०—क्योंकि यह खड़े-खड़े गाया जाता है। इसीलिये क्या ?

बण्टा०—हाँ हाँ, ठीक है। खड़ी बोली कहलानेका यही कारण होगा। इशकी कविता अवश्य ही खड़े-खड़े गढ़ी जाती होगी। नहीं तो भला इशका नाम खड़ी बोली क्यों होता ? तुम हमारी 'नवीन पत्रिका' के लिये ऐशी ही कविता अपनी श्त्रीके नामशे भेजो।

पेटू०—अब औरत कहांसे लायें ? तुम्हीं चाहे हमारे लिये कोई बन्दोबस्त कर दो। बड़ा उपकार होगा।

बण्टा०—अरे ! तो कोई फ़र्ज़ी बना लो। कवियोंको तो शब काम कल्पना शक्तिहीशे लेना चाहिये।

पेटू०—तो हम कवि हैं ? क्या सचमुच कवि हैं ? तुम्हें ठीक मालूम है ?

बण्टा०—हां हां, और तुम्हारी खड़ी बोलीमें बड़ा रश है। हम तो पहले शमझते थे कि इश बोलीमें रश होता ही नहीं।

पेटू०—अजी हमारी बोलीमें जानते हो रस क्यों है ? इस चूरनकी बदौलत। बिना चूरनकी झोली गलेमें डाले हुए कहीं खाली बोली भी प्यारी लगती है ?

बण्टा०—ठीक है, ठीक है। अब शमझे। कवितामें रश न आनेका कारण अब शमझे। हम अपनी पत्रिकाके कवियों-को यही शलाह देंगे कि यदि अपनी कवितामें रश चाहते हो तो चूरनकी झोली भी अपने गलेमें डाले फिरो। निशन्देह तुम कवि और श्वाभाविक कवि हो। तभी तो इन बातोंको जानते हो।

पेटू०—तो हम कवि हैं। अयँ ? हम कवि हैं ! और तुम ?

बण्टा०—कै दफे कहें जी, हम हैं शम्पादक श्रीमान् बण्टा-धारजी।

पेटू०—क्या ? जरा देशी बोलीमें समझाकर कहो।

बण्टा०—अरे हम शम्पादक हैं। अखबार छापते हैं।

पेटू०—तुम ? तुम ? तुम ? अखबार छापते हो ?

बण्टा०—क्यों, इसमें इतने बड़े अचरजकी बात क्या है ?

पेटू०—अरे ! चोर लुटेरे गिरहकट या डाकू भी अपनेको बताते तो हम बेखटके मान लेते। मगर पढ़े-लिखोंको तुम कैसे धोखा देते हो भाई ? तुम तो कुछ भी पढ़े नहीं हो। खततक लिखना नहीं जानते हो।

बण्टा०—तभी तो शम्पादक बन गये। लेखक बनते तो लेख लिखना पड़ता। कवि बनते तो कविता करनी पड़ती और शम्पादक बननेमें मजेशे बैठे-बैठे तोंद फुलानी पड़ती है। जबशे शम्पादक बने हैं तबशे शाढ़े शत्रह इंच तोंद बढ़ गयी है। चाहे नापके देख लो।

पेटू०—मगर लेखोको छाँटनेके लिये तो ल्याकतकी जरूरत पड़ती है ?

बण्टा०—कुछ भी नहीं। हम तो खाली शिक्षाकी दुम-टटोलकर जान लेते हैं कि कौन लेख उत्तम है और कौन नहीं।

पेटू०—अगर किसीमें दुम सिकुड़ी हुई हो तो क्या हो ? तब तो ल्याकतकी कलई तुरन्त खुल जायेगी।

बण्टा०—कदापि नहीं। इशी कारण तो हम लोग भर-पूर यही चेष्टा करते हैं कि हमारा शाहित्य शदैव नाशमझ बच्चों और कमपढ़ी स्त्रियोंहीके बीचमें पड़ा रहे, ताकि हम लोगोंकी आबरू बनी रहे।

पेटू०—बस इस पेशेमें इतनी ही चालबाजी है ? तब तो

इसमें कोई बड़ा फायदा नहीं दिखायी तुम्हारी तबियत इसमें कैसे लगती होगी ? तुम तो सरसे पैरतक बेईमान ही बेईमान हो।

बण्टा०—वाह ! वाह ! हम ऐशे महात्मा लोग भला कहीं अपनी आदतशे चूकते हैं ? जहां पहुंचे वहीं अपना करतब दिखा देते हैं। हमको देखो। हमारी 'नवीन पत्रिका' होगी माशिक। मगर तीन बरशमें केवल दो बार होगी प्रकाशित। कहलायेगी शचित्र, मगर चित्र एक भी न होगा। पृष्ठ होंगे उशमें केवल दो। पहिलेमें हमारे मैनेजर शाहबका रोना होगा। "हीन हिन्दी" "हीन हिन्दी" कहकर उशमें ऐशा विलख-विलखकर रोयेंगे कि पत्रिकाके गुणोंके कारण तो कोई भी नहीं, मगर तरश खाकर शभी ग्राहक हो जायंगे। और दूशरे पेजमें फैशनेबिल रोगोंका विज्ञापन होगा। और थोड़ी शी जगह जो कहीं बीचमें बच जायेगी, उशमें आप ऐशे कवियोंकी कविता या कोई अनुवाद होगा। जब दो अङ्कोंके जालमें ग्राहक-ग्राहिकाओंके झुण्डके झुण्ड फंश जायंगे और बहुतशे शंरक्षक और मान्य ग्राहकगण भी उलझ पड़ेंगे। और कोई फंशनेवाला अशामी बाकी न बचेगा। बश, वैशे ही रुपया हजम और पत्रिका बन्द। फिर नया दाना और नया पानी। थोड़े दिनोंके बाद फिर दूशरा पत्र

निकालेंगे और कम्बल ओढ़कर फिर लूटना शुरू करेंगे।

पेटू०—मगर काठकी हांड़ी कै दफे आगपर चढ़ेगी? दो एक दफे जो ऐसी कार्रवाई की तो भला कैसे किसी अख़बारपर ग्राहकोंका एतबार होगा। और एक दफा धोखा खाकर फिर कोई काहेको किसी अखबारका ग्राहक होनेका नाम लेगा? आखिरमें बड़ा गड़बड़ होगा।

बण्टा०—वह तो होगा ही। ईश्वर चाहेगा तो थोड़ेही दिनोंमें हम महात्मा लोग शब पत्रोंके पैर उखाड़ देंगे। और मातृभाषाकी जड़ खोदकर फेंक देंगे, शपूत वही जो पहिला वार मां-बापही पर करे।

पेटू०—इस जगह तो हम भी कायल हैं। अच्छा पेशा है। मगर ठीक-ठीक बताओ कि इसमें बड़ा फायदा है?

बण्टा०—न एतबार पड़े तो देखो यह ५०) का नोट। अभी-अभी एक मान्य ग्राहिकाको फांशा है।

पेटू०—अयँ। ५०) का नोट! तब तो भाई हम भी सम्पादक होंगे। तरकीब तो तुमने बता ही दी। बस, हम भी सम्पादक होंगे।

बण्टा०—क्या-क्या? तुम शम्पादक होगे?

पेटू०—होंगे कि हो गये। अजी हम इसी दमसे संपादक हो गये। बस हम कुछ नहीं, अब सम्पादक हैं। ऐसा पत्र

निकालेंगे जिसमें हमारी ल्याकतकी कलई किसीपर न खुले। तारीफ तो तभी है। इसलिये हमारी पत्रिका होगी जानते हो किसके लिये? गर्भके भीतर रहनेवाले बच्चोंके लिये। वही उसके ग्राहक होंगे और वही उसके लेखक। और उसमें लिखा क्या होगा? 'केहां' 'केहां'। बस, अब सम्पादक हो गये। कहो बेटा, तुमसे बढ़कर निकले कि नहीं? हमारे पत्रका बड़ा प्रचार होगा। क्योंकि हमने जड़को ताका है। लो यह बेटा चूरनकी झोली गलेमें डालो। तुम बेचो चूरन और हम हो गये सम्पादक, रुपया कमानेकी अच्छी तरकीब बतायी तुमने।

(बण्टाधारके गलेमें चूरनकी झोली डालकर भाग जाता है)

बण्टा०—अयँ। यह क्या हुआ? यकायक पागल हो गया? नहीं-नहीं, यह तो बेढब धूर्त निकला। धीरे-धीरे उशने हमशे शब तरकीबें जान लीं और हमको उशने एक भी कविता नहीं दी। उलटे दुष्ट यह चूरनकी झोली मेरे शिर लाद गया। हम इशको लिये लिये कहां फिरें? हम भी तो शम्पादक हैं। कुछ परवाह नहीं। अच्छा ही हुआ, भागे भूतकी लंगोटी भली। कोई पूछेगा तो कह देंगे कि हमारे पाश शमालोचनाके लिये आया है। आहा हाहा! कैशा शोचा।

(दो-तीन लड़के और चार-पाँच आदमियोंका आना)

पहला आदमी—वह है वह !

दूसरा आदमी—अबे ओ चूरनवाले ! बेईमानके बच्चे, हमारे लड़केसे रुपया ले लिया और बदलेमें एक पैसेका चूरन और दो आने पैसे देकर फुसला दिया।

तीसरा आदमी—और क्यों बे पाजी, हमारे लड़केको तूने चूरनकी खाली एक ही पुड़िया देकर चौअन्नी ठग ली। और वहांसे ऐसा गायब हुआ जैसे गदहेके सरसे सींग।

पहला आदमी—तो देखते क्या हो ? मारो इस बेईमानको।

(सब लोग बण्टाधारको मारते हैं)

बण्टा०—अरे बापरे बाप ! शुनो-शुनो ! हम चूरनवाले नहीं हैं।

पहला आदमी—हाँ हाँ, चूरनवाले नहीं तुम ठग हो। बेईमान हो। चोर हो। डाकू हो। लुटेरे हो।

दूसरा आदमी—ले चलो इसे दारोगाजीके पास।

तीसरा आदमी—मारते हुए ले चलो।

गाना

तीनों आदमी—सरको फोड़ो, पीठ तोड़ो, मारो लेलो इसकी जान।

बण्टा०—छोड़ो छोड़ो मेरे प्रान हाय गई मेरी आन बान शान।

तीनों आदमी—चुप बे झूठा बेईमान, पकड़ो इसके कान
मारो चांटा तान।

(सबका जाना)

(पर्दा उठता है)

छठा दृश्य

लेखक बम्भोलानाथका मकान

(बम्भोलानाथ और गड़बड़)

बम्भोला०—क्यों भाई गड़बड़ ! औरतके मनानेकी क्या-क्या तरकीबें हैं ?

गड़बड़—किसी भड़ुएसे पूछिये।

बम्भोला०—अच्छा तो मैं तुमसे पूछता हूँ।

गड़बड़—तो आपने क्या मुझे कोई भड़ुआ समझ रखा है ?

बम्भोला०—नहीं भाई, बात यह है कि सम्पादक छटंकी-लालने लिखा है।

गड़बड़—किसीको बहकाने या फुसलानेके लिये ?

बम्भोला०—नहीं, एक लेख लिखनेके लिये।

गड़बड़—तो फिर औरतसे क्या सरोकार ?

बम्भोला०—भाई वह जरा चुटपुटा विषय चाहते हैं।

गड़बड़—तब तो आप कचालूपर लिखिये। दही बड़ेपर लिखिये। या फिर पोदीनेकी चटनीपर लिख डालिये।

(पोस्टमैनका आना और बहुत-सी चिट्ठियां बम्भोलानाथके हाथमें देकर जाना)

बम्भोला०—अहो! आज तो लेखके लिये इस दिमाग-पर बेतरह धावे किये गये हैं।

गड़बड़—क्योंकि सम्पादकोंने आपकी चाँदको बिल्कुल चाँद मारी समझ रखा है।

बम्भोला०—पूरे एक दर्जन खत हैं। जिनमें आठ श्रीमतीजीके हैं। सबमें लेखकी मांग है। और खड़ी बोलीकी पुकार है। मगर पुरस्कारका कहीं नामोनिशान नहीं।

गड़बड़—तब लाइये इधर। सबको पन्सारीके हवाले कर आऊँ।

बम्भोला०—मगर पुरस्कार तो छोटी चीज है। इसका न लेना ही अच्छा।

गड़बड़—तब समझ लिया कि आपके लेख भी दो कौड़ीके होते होंगे।

बम्भोला०—अच्छा, सम्पादक विलक्षणको क्या जवाब दूँ?

गड़बड़—यही कि लेख तैयार है। सिर्फ उसमें शिक्षाकी एक दुम लगानी बाकी है।

बम्भोला०—और खड़ी बोलीकी कविताके लिये ?

गड़बड़—कोशिश कर रहा हूं, जरा और बेतुकी हो जाय तो भेज दूंगा।

बम्भोला०—अच्छा, सम्पादक प्राणको क्या लिखा जाय ?

गड़बड़—ओहो ! पन्सारियोंको रद्दी कागज पहुँचानेके लिये कोई नये ठेकेदार मालूम होते हैं।

बम्भोला०—हां नया पत्र निकलनेवाला है। खैर, इन सबको मैं सम्भाल लूंगा। और श्रीमतीजीकी तरफसे भी सब लेख हमेशाकी तरह लिख डालूंगा।

गड़बड़—पहले आप अपनी नौकरीसे इस्तीफा दीजिये। पेटको भाड़में झोंकिये। घरके कामको ताकमें रखिये। फिर इतमीनानसे चाहे अपने नामसे या स्त्रीके नामसे दनादन लेख भेजिये।

बम्भोला०—मगर छटंकीलालकी फ़रमाइश ज़रा टेढ़ी है, फिर दुबारा याद दिलायी है कि 'मनावन' पर लेख जल्द भेजिये। अङ्कका मैटर प्रेसमें जा चुका है। मगर लिखूं क्या अपना सर, महीना ठहरा कातिकका।

गड़बड़—तो क्या हुआ कुछ बौराये हुए तो हैं नहीं आप जो न लिख सकें।

बम्भोला०—नहीं भाई ऐसे लेख बरसातहीमें खूब सूझते

हैं। जब बिजली तड़पती हो। बादल गरजते हों। पानी झमाझम बरसता हो। दिमाग़में प्यारीकी मोहनी तस्वीर खिंची हुई हो। तब देखो लेखमें कितना रस आता है। भाई, मेरी बरसातहीमें लेख लिखनेमें तबियत लगती है।

गड़बड़—तो यह कहिये, आपकी नसल मेढककी है।

बम्भोला०—और फिर दूसरी मुसीबत यह है कि मैं जानता ही नहीं कि रूठी औरत कैसे मनायी जाती है।

गड़बड़—सिर्फ डण्डेकी मददसे। और ज्यादे ज़रूरत पड़े तो दो लात भी लगा दे।

बम्भोला०—छि! छि! छि! मैं कुञ्जड़ों-कबड़ियोंका ज़िक्र नहीं करता।

गड़बड़—तो क्या मैं कोई कुञ्जड़ा-कबड़िया हूं?

बम्भोला०—अरे भाई, तुम तो बात-बातमें पलीता हुए जाते हो। विषय है मुश्किल। गो सम्पादकजीने पुरस्कारके लिये कुछ नहीं लिखा है मगर यह ज़रूर वादा किया है कि इसके लिये चित्र मिलनेमें और लेख लिखनेमें जो कुछ खर्च पड़े सब कार्यालय देगा।

गड़बड़—आहाहा। यह बात है, तब क्या देखते हैं? कार्यालयके खर्चेपर मेरी शादी करा दीजिये। मेरा भी काम हो जाये और आपका भी। अभी-अभी मनावनका मसाला

तैयार हुआ जाता है। सिर्फ दुलहिनके रूठनेकी कसर है।

बम्भोला०—यहींपर तो आकर अटकता हूँ। मुझे औरतके मनानेका कोई तजुर्ब्बा ही नहीं। क्या कहूं, मेरी श्रीमतीजी ऐसी भोंड़ी और बेवकूफ़ हैं कि वह रूठना जानती नहीं। और फिर उमर ज़रा बढ़ गयी है।

गड़बड़०—तो ख़ातिर जमा रखिये, मिरचा जितना सूखता है उतना कड़ुआ होता है।

बम्भोला०—मगर भई, तुम्हें मनावनका सांचा ज़रूर बनाना पड़ेगा। चाहे जैसे हो। जबतक यह दस लेख तैयार हैं। घर जाते वक्त डाकख़ानेमें इन्हें छोड़ देना। और यह भंगिनकी बेटी सम्पादक प्राणको दे देना।

गड़बड़—यह सब काम हो जायेगा। मगर इतना बता दीजिये कि यह भंगिनकी बेटी कैसा लेख है।

बम्भोला०—इसमें भङ्गिनकी बेटीका प्रेम दिखाया है।

गड़बड़—राम! राम! छि! छि! अजी आँखें खोलिये आँखें! अगर आप ऐसी बेतुकी उड़ाया करेंगे तो समाज आपपर थूकेगा भी नहीं।

बम्भोला०—अहा! क्या गुदड़ीमें होनेकी वजहसे लालकी कदर कम हो जायगी? हम लेखक हैं, दिल ढूँढ़ना हमारा काम है। चाहे वह सोनेके डिब्बेमें हो या हाँड़ीमें। इसको

परवाह नहीं। प्रेममें होशियार वही होता है जो दीवाना है। अकल और समझसे हाथ धो बैठा है। जात-पाँतके विचार-को खो बैठा है।

गड़बड़—राम ! राम !

बम्भोला०—ऐसे जबरदस्त प्रेमकी भला क्या दवा हो सकती है ?

गड़बड़—सिर्फ़ फीनाइलकी एक बोतल।

बम्भोला०—अपनी दवा अपने पास रखो। मैं अब दरियाके किनारे मनावनका विषय सोचने जाता हूँ। जबतक तुम भी इसके लिये कुछ सोच रखना। (जाता है)

गड़बड़—लो यारो, प्रेम भी अब नाबदानोंमें बह निकला। बस हद हो गयी। अच्छा, यह दस लेख तो डाकखानेके हवाले कर आऊँ, मगर भङ्गिनकी बेटीवाला जरा खोलूँ तो।·····ओ हो ! यह तो सब प्रेमकी चिट्ठियाँ हैं। अच्छा, इनको लौटकर पढ़ूंगा।

(इसको वहीं मेजपर छोड़कर जाता है)

(पर्दा गिरता है)

सातवां दृश्य

सड़क

(दिलजला अखबारोंका पुलिन्दा लिये जाता है)

दिल०—अखबारवालोंसे जाने कौनसी दुश्मनी थी कि मेरी अच्छी खासी स्त्रीको लेखिका बनाकर सत्यानाश कर दिया। लोग कहते हैं कि बड़ी खुशीकी बात है कि तुम्हारी जोरू इस क़ाबिल तो हुई। और मैं कहता हूँ कि मेरे दुश्मनों-की भी स्त्रियाँ ऐसी ही क़ाबिल हो जायें। मैं मरा-खपा भूखा-प्यासा कचहरीसे आया और उस कम्बख्तने यह नादिर-शाही हुकुम देकर उलटे पैर वापस किया कि इसी वक्त किसी अच्छे लेखकके पास जाकर कोई कविता या लेख लिखवाकर "नवीन पत्रिका" में मेरे नामसे छपनेके लिये डाकसे रवाना करके तब घरमें कदम रखना; क्योंकि तुम्हींने आकर बकझक करके मेरा दिमाग खप्त कर दिया। और मेरा सोचा हुआ पद इस गड़बड़झालेमें भुलवा दिया। या ईश्वर, अब मैं कहाँ लेखक ढूँढ़ने जाऊं ? भूखसे अलग जान निकल रही है। अखबारोंका पुलिन्दा, तेरा ही सहारा है। चल, तुझे पंसारीके हवाले करके थोड़ा-सा गुड़ खाकर पानी तो पी लूँ। इसीलिये तुझे घरसे चुरा लाया हूँ। फिर आगे देखा जायगा। या

ईश्वर, किसी लेखकसे मुलाकात करा दे जो मेरी मुश्किल आसान कर सके।

(गड़बड़का आना)

दिल०—क्यों भाई, आप कौन हैं ?

गड़बड़—मैं समझा आप मुझसे पूछ रहे हैं। माफ कीजियेगा, धोखा हो गया।

दिल०—अरे सुनिये हजरत ! मैं आपहीसे पूछ रहा हूँ।

गड़बड़—(इधर-उधर देखकर) क्या मुझको पुकार रहे हैं ?

दिल०—हां, साहब हां। क्या आप मुझे किसी कविका पता बता सकते हैं ?

गड़बड़—एक नहीं सैकड़ोंका।

दिल०—तो मिहरबानी करके बता दीजिये, कहां मिलेंगे यह लोग।

गड़बड़—सीधे पागलखाने चले जाइये।

दिल०—और लेखक ?

गड़बड़—इनको तो काञ्जीहौजमें ढूंढ़िये या दरियाके किनारे चराईपर।

दिल०—मसखरापन छोड़िये मुझे इन लोगोंकी सख्त जरूरत है। सच कहता हूं।

गड़बड़—मैं भी तो सच ही कह रहा हूं। वहांतक जानेकी तकलीफ भी तो कीजिये। तब मेरी सचाई-झुठाई आपसे आप मालूम हो जायेगी।

दिल०—मुझे यकीन नहीं आता।

गड़बड़—मैंने पहिले ही जान लिया था कि आप मुझसे नहीं पूछ रहे हैं। वरना यकीन न आनेकी वजह क्या थी?

दिल०—(अलग) अजीब बेतुका आदमी है। मगर इसके बेतुकेपनमें भी मेरे मतलबकी बात झलक रही है। (प्रकट) क्यों भाई, चल दिये? अरे यह तो बताते जाइये कि मैं कवियों और लेखकोंको पहचानूंगा क्योंकर!

गड़बड़—क्या कहा? पहचानूंगा क्योंकर? बड़ी सहल तरकीब है। सुनिये। कवियोंकी खोपड़ीमें आँख होती है। जिससे वह सिवाय आस्मानके किसी तरफ देख ही नहीं सकते। और लेखकोंकी आंख पीछे होती हैं, जिससे वह पीछेहीकी बातें देखा करते हैं। सामनेकी चीज उन्हें कोई नजर नहीं आती।

दिल०—बस जनाब, बस, मैंने आपको पहचान लिया। आप ही कवि हैं, अगर कवि नहीं तो लेखक होनेमें कोई शक ही नहीं।

गड़बड़—यह क्योंकर?

दिल०—आपकी बातोंसे।

गड़बड़—नहीं भाई, मैं कसम खाकर कहता हूं कि मैं कवि नहीं हूं।

दिल०—और मैं भी कसम खाकर कह सकता हूं कि आप कवि नहीं तो लेखक जरूर हैं। वरना आप ऐसी बातें करके मुझे बहकानेकी कोशिश न करते।

गड़बड़—(जाता हुआ) आजकल किसीसे बातें करना भी मुसीबत है।

दिल०—(पीछे पीछे जाता हुआ) चलिये, जहाँ चलिये, अब तो आपको छोड़ नहीं सकता। बड़े भाग्यसे आप मिले हैं।

गड़बड़—(ठहरकर) अच्छा, लेखकको पाकर आप क्या करेंगे ?

दिल०—पहिले उनके हाथ जोड़ूंगा, इज्जत करूंगा! खुशामद करूंगा। फिर···।

गड़बड़—(लौटकर) वाह! वाह! लाइये हाथ। अब-तक क्यों नहीं बताया आपने ?

दिल०—मैंने पहिलेही आपको जान लिया था।

गड़बड़—और मैंने भी अब जान लिया कि इस वक्त-लेखकही बननेमें भलाई है।

दिल०—अच्छा, कृपा करके पहिले अपना नाम तो बता दीजिये।

गड़बड़—अरे! नाम न पूछिये। वरना गड़बड़ाध्याय यहींसे शुरू हो जायगा। बस इतना ही सबूत काफी है कि यह सब मेरे ही लिखे हुए हैं। और रोज ही इतने लेख डाक-खानेके हवाले करता हूँ।

दिल०—(लिफाफोंको देखकर) क्या आप ही महात्मा बम्भोलानाथ हैं?

गड़बड़—जो समझ लीजिये।

दिल०—तो फिर क्या, एक लेख मुझे भी दीजिये।

गड़बड़—(अलग) यह तो बुरी कही।

दिल०—हाथ जोड़ता हूं, अभी लिख दीजिये।

गड़बड़—(अलग) अब और भी बुरी कही। यह तो इम्तहान लेने लगा।

दिल०—मैं आपके पैरोंपर टोपी रखता हूं।

गड़बड़—बस जनाब, अपनी खुशामद वापस लीजिये वरना मुझे लेखक बम्भोलानाथकी पदवी वापस कर देनी पड़ेगी।

दिल०—चाहे जो कुछ हो बिना लेख लिये मैं आपका साथ न छोड़ूंगा।

गड़बड़—क्यों जनाब, क्या आप कोई नये सम्पादक हैं जो मार-मारकर सबसे लेख लिखाते फिरते हैं?

दिल०—नहीं भाई! असल बात यह है कि मेरी बीबी साहबाको पहिले सिर्फ अखबार पढ़नेहीका शौक था। पढ़ते-पढ़ते खुद लेखिका बननेकी भी धुन समा गयी। आज सुबहसे कविता करनेका खप्त पैदा हो गया। बारह घण्टे लगातार सर मारनेपर कहीं एक पद बैठाल सकी थीं कि इतनेमें मैं आफतका मारा पहुंच गया। बकझक शुरू हुई। इस गोलमालमें वह सोचा हुआ पद भूल गया। फिर तो जनाब, लेनेके देने पड़ गये। लगीं रोने कि सुबहकी डाकसे कैसे कविता भेज सकती हूं। तुमने आकर मेरा दिमाग ऐसा गड़बड़ कर दिया कि अब एक शब्द भी दिमागमें नहीं आता। हाय! कविताके बदले कोई लेख ही भेज सकती, तब भी तसकीन हो जाती। यह देख मेरी हक्कीबक्की बन्द हो गयी। मैंने उनसे वादा किया कि लेख जैसे होगा वैसे आज ही किसी अच्छे लेखकसे लिखवाकर आपके नामसे भिजवा-कर तब लौटूंगा। इसीलिये भाई, आपकी इतनी खुशामद कर रहा हूं।

गड़बड़—फ़जूल और बिल्कुल फ़जूल। क्योंकि लेख तो आप खुद ही लिख सकते हैं।

दिल०—क्या कहा ?

गड़बड़—बिलकुल सच ! वह तरकीब बताऊं कि लेखका लेख तैयार हो जाये। (अलग) और मेरे सरसे यह बला भी टले।

दिल०—मगर मैं क्या जानूँ लेख लिखना ?

गड़बड़—आजकी बातें जो आपके घरपर हुई हैं वह तो याद हैं ?

दिल०—जी हां, हर्फ बहर्फ।

गड़बड़—बस, इसीको आप 'मरदानी औरत' के नामसे लिख डालिये। इसके लिये आपकी घरवालीसे बढ़कर चरित्र और कहां मिल सकता है ? और उनका पूरा-पूरा फोटो आपके सिवाय दूसरा कोई खींच भी नहीं सकता क्योंकि जो बात दिलसे निकलती है वह दिमागसे उतनी सचाईके साथ निकल नहीं सकती। इसको लिखकर अपनी स्त्रीके नामसे भेज दीजिये। उसके बाद उसी लेखपर खूब जलीकटी समालोचना लिखिये। इसका भी लिखनेवाला आपसे बढ़कर कट्टर पक्षपाती कोई हो नहीं सकता। और समालोचकोंके लिये आजकल पक्षपाती होना बहुत जरूरी है। यों लिखिये कि इस लेखिकाने 'मरदानी औरत' का चरित्र खींचनेमें बड़ी गलती की है। स्त्रियोंमें इतनी बेशर्मी, कठोरता, निर्दयता,

मरदानियत इत्यादि कभी नहीं होती। इसमें तो कोई भी बात नहीं जो स्त्रियोंको स्त्री बनाती है। यही सब लिखकर महात्मा बम्भोलानाथ यानी मेरे नामसे किसी दैनिक अखबारमें इस नोटके साथ भेजिये कि उस पत्रिकाके छपनेके दो-एक दिन बाद यह प्रकाशित हो। फिर इसी तरहकी सैकड़ों ही समालोचनाएँ बहुतसे पत्रोंमें आपसे आप निकलनी शुरू हो जायेंगी। क्योंकि कुएँमें एक भेड़के गिरते ही सब भेड़ें अन्धोंकी तरह उसीके पीछे गिरती हैं। ईश्वर चाहेगा तो आपका बिगड़ा घर सुधर जायेगा। फिर कभी श्रीमतीजीको लेख लिखवानेकी जरूरत न पड़ेगी।

दिल०—ईश्वर करे ऐसा ही हो। मगर कैसे बिगड़ा मामला सम्भलेगा। यह समझमें नहीं आता।

गड़बड़—बस, अब जान छोड़िये। जैसा बताया है वैसा कीजिये। रूपके घमण्डी कुरूपोंको हाथमें आइना देकर घमण्ड चूर कीजिये। अपने चैन व आरामके रास्तोंसे कांटे यों दूर कीजिये और मेरा सलाम कबूल कीजिये।

(जाता है)

दिल०—सलाम भाई सलाम।

गाना

दिल०—बस जाता हूं मैं झटपट।

यह चाल चलूं अब चटपट।
उस नटखटको यों ठीक करूं।
फिर दूर करूं सब खटपट।
(जाता है)
(पर्दा उठता है)

आठवां दृश्य

बम्भोलानाथका मकान

रामभोली

गाना

रामभोली—

छल करके पिया चल दीन्हें कहीं नहीं आये अभी हूं मैं बेकल पड़ी।
हाय सइयां बिना मोरी रतियां न अँखिया लगीं।
रही आस निहारत द्वारे खड़ी।
नहीं आये पिया घबड़ाये हिया नाहीं लागे जिया मोरा एको घड़ी।

रामभोली—सारी रात ग़ायब रहे। न जाने कहां चले गये। कचहरी जानेका वक्त आ गया। मगर अबतक लौटकर नहीं आये। पता ही नहीं चलता उन्हें क्या हो गया है।

कचहरीसे आते हैं दरियाके किनारे और कभी मुर्दोंके घाटपर मारे-मारे फिरते हैं। सरकारी काममें भी उनका जी नहीं लगता। क्योंकि हर महीने जुरमाने ही हुआ करते हैं। घरपर जब रहते हैं तो रातों दिन सादा कागज लिये गुनगुनाया करते हैं! न घरकी फिक्र और न बच्चोंका खयाल।

(गड़बड़का आना)

आहा! गड़बड़ खूब आये! कहो, रात क्या वह तुम्हारे ही यहाँ रह गये?

गड़बड़—क्यों, क्या अबतक महाशय बम्भोलानाथ घर नहीं लौटे?

रामभोली—नहीं। रातका वक्त और जाड़ेका मौसिम। आखिर रहे तो कहां?

गड़बड़—इसकी क्या परवाह। वह तो लेखक ठहरे।

रामभोली—लेखकसे मतलब पागल न?

गड़बड़—अखबारोंके चक्करमें जो डवांडोल हो उसे पागल ही समझिये। और यह भी तो अखबारोंहीकी बदौलत ऐसे हुए कि न घरके कामके रहे न बाहरके।

रामभोली—तो अब क्या किया जाये?

गड़०—एक हर्जेका दावा कर दें अखबारवालोंपर, कि हमारे मर्दको एकदम निकम्मा कर दिया। इसकी गवाही मैं

दूँगा। हलफिया बयान करूँगा कि रांड भली मगर लेखककी स्त्री नहीं भली। और दूसरी तरकीब यह है कि उनकी जितनी किताबें और अखबार हैं सब जला दीजिये। झगड़ा खतम हो।

रामभोली—मैंने एक ओझाको भी बुलाया है।

गड़०—क्या यह जाननेके लिये कि कोई आसेबका मामला तो नहीं है?

रामभोली—हां, शायद कोई भूत या चुड़ैल हो तो उतर जाये और उनकी हालत सम्भल जाय।

गड़०—अरे, खूब याद दिलायी। उनपर बड़े-बड़े भूत सवार हैं। गिनिये। सम्पादक विलक्षण, सम्पादक प्राण, सम्पादक छटंकीलाल इत्यादि।

(ओझाका आना)

ओझा—माईजी, जगह बताइये कहाँ मन्त्र जगाऊँ? दो भरे कलसे मँगाइये। उड़हुलका फूल। और……।

रामभोली—तुम अपना सब सामान इसी जगह दुरुस्त करो। और आंगनसे कलसे ले आओ। (ओझा जाता है)

गड़बड़—मैं भी अब सब किताब अखबार वगैरहका ढेर जलानेके लिये इकट्ठा किये देता हूँ।

रामभोली—बेशक! बेशक! सब जला दो। न रहेगा

बांस न बाजेगी बांसुरी।

(ओझा कलसे और आग लाकर मन्त्र जगानेकी तैयारी करता है)

रामभोली—लो यह भी जलाओ। यह भी जलाओ। (भङ्गिनकी बेटीवाला लेख उठाकर) यह कैसा कागज है ?

गड़बड़—छि ! छि ! छि ! फेंकिये। फीनाइलसे हाथ धोइये।

रामभोली—क्यों ? क्यों ? यह क्या हैं ?

गड़बड़—क्या बताऊँ ? प्रेमकी चिट्ठियाँ हैं।

रामभोली—अयँ ? किसने लिखी हैं ?

गड़बड़—आपके पुरुषने।

रामभोली—क्या ? उन्होंने ? और प्रेमकी चिट्ठियाँ लिखी हैं ? हाय ग़ज़ब ! किसको ?

गड़बड़—एक भङ्गिनकी छोकड़ीको।

रामभोली—उफ़ ! यह क्या सुनती हूँ ?……फिर यहाँ यह किस लिये पड़ी है ?

गड़बड़—मुझे कह गये थे कि इसे दे आना।

रामभोली—आह लुट गयी ! जात गयी ! धर्म गया ! हाय राम ! मेरे कर्म फूट गये। किसीको छूनेके क़ाबिल भी न रखा। अब समझी, तभी रातभर ग़ायब रहे।

(लेख फेंककर गुस्सेसे बैठ जाती है। गड़बड़ उसे उठाकर देखता

है। बम्भोलानाथ चुपकेसे आकर एक कोनेमें खड़ा होता है।)

बम्भोला०—(अलग) हम तो निकले थे लेखका विषय ढूँढ़ने और पुलिसने आवारागर्दीमें रात भरके लिए हवालातमें बन्द कर दिया। वाह रे देश! मगर अररर! यह लंकाकांड कैसा?

गड़बड़—ओहो! भंगिनसे प्रेम, और चिट्ठियाँ लिखी गयी हैं खड़ी बोलीकी कवितामें। बिल्कुल अप-टू-डेट प्रेम है। ज़रा सुनियेगा।

जो थे राजा हरिचन्दर बिके भंगीके घर जाकर।
बुरा कहते हो क्यों लोगों, अगर हम उसपे मरते हैं।

बहुत दुरुस्त मबूत मय नज़ीरके।

रामभोली—ईश्वरके लिये जल्दी जला दो। इसे जला दो।

बम्भोला०—(अलग) क्या? मेरे लेखको? (प्रकट) हाय! हाय! ख़बरदार! ख़बरदार! इसी लेखकी बदौलत "कवि बुलन्द" नामक स्वर्णपदक मिलेगा।

रामभोली—अलग! अलग! बस दूर। छूना मत। कोई उधर है। इनको जल्दी नहलाओ। पहिले जल्दी नहलाओ।

(गड़बड़ लेख आगमें फेंककर एक कलसा पानी लेकर बम्भोलानाथपर उड़ेल देता है। ओझा भी दूसरा गगरा उठाकर उसपर पानी छोड़ता है।)

बम्भोला०—अरे बापरे बाप ! जान गयी। मार डाला।

ओझा—वह बोला भूत। जै काली अन्तर मन्तर जन्तर वाली। छू छू छू।

रामभोली—अभी नहीं। अभी नहीं। पहिले पराश्चित होले तब।

बम्भोला०—अरे बाप रे बाप ! यह है कैसी दुर्दशा ?

गड़बड़—कुछ नहीं। आपके "मनावन" के लेखका तैयार है सांचा। अब सिर्फ मज़मून ढालनेकी जरूरत है। कपड़े भींगे हैं। समझ लीजिये बरसातका मौसिम है। श्रीमतीजी सामने रूठी हुई हैं। यह कलम है और यह काग़ज़। आपके हुकुमके बमौजिब लेखका साँचा पूरे तौरसे तैयार कर दिया। आप बेखटके मज़मून ढालिये।

बम्भोला०—अरे मैं बाज़ आया। चूल्हेमें जाये वह मज़मून।

ओझा—वह फिर भूत बोला। वह मारा वह मारा। अब भागता है। (बम्भोलानाथको मारता है)

बम्भोला०—अरे बाप रे बाप !

ओझा—माईजी, आप न घबड़ाओ। भूतके चोट लग रही है।

गड़बड़—तब और ज़ोरसे।

बम्भोला०—अरे बापरे बाप। दौड़िये सम्पादकजी।

रामभोली—भंगिनकी छोकड़ी।

गड़बड़—लेखका साँचा।

ओझा—बोल भूतका नाम। वह मारा।

बम्भोला०—सम्पादकजी दौड़िये।

ओझा—आहाहा! सम्पादकजी बड़े तेज़ हैं। सम्पादकजी जान छोड़िये। बकरा दूँगा बकरा। वह मारा।

(बम्भोलानाथ मारा जाता है)

गाना

रामभोली—दोहाई! दोहाई! दोहाई! सम्पादकजी, पुरुषपर करो अब मेरे दया।

बम्भोला०—दोहाई! दोहाई! दोहाई! सम्पादकजी जल्दीसे लो मेरी जान बचा।

गड़बड़—दोहाई! दोहाई! दोहाई! सम्पादकजी मेरी भी दो कहीं शादी रचा।

ओझा—भगाओ भगाओ भगाओ जि भूतको थप्पड़ ओ घूँसे ओ मुक्के लगा।

(पटाक्षेप)

द्वितीय अङ्क

पहला दृश्य

मदनका मकान

(मदन बेचैनीकी हालतमें)

मदन ! मदन ! तू इतना बड़ा नामी लेखक, जिसकी क़लमने सैकड़ों ही प्रेमी-प्रेमिकाओंको उँगलियोंपर नचाकर रसिक पाठकोंको तमाशा दिखाया है। तू जिसने प्रेमियोंके कामोंपर ठट्ठा मारते हुए चुटकियां लेते हुए उन्हें बेवकूफियोंके साँचेमें ढाला है। अरे ! तू जो प्रेमके परिणामको दिखाकर प्रेमको सैकड़ों बार कोस चुका है। ताज्जुब है कि प्रेमके दांव-पेंचको बखूबी जाननेवाला, लगावटकी नजरको परखनेवाला, प्रेमके अमृतको विष समझनेवाला, प्रेमी-प्रेमिकाओंको कठ-पुतलियोंकी तरह नचाने वाला, तू आज खुद अपनी कठपुत-लियोंमें शामिल होकर बुरी तरह नाच रहा है। मदन ! ज़रा

अपनेको देख। तेरी अक्ल कहां गयी ?·····अरे ! तुम फिर आंखोंके सामने आयी। मुझे सतानेके लिये आयी। क्या करूं ? कहां जाऊं ? लो, आँखें बन्द किये लेता हूं। न देखूंगा। उफ़ ! फिर भी दिखायी दे रही हो। नज़रोंमें समायी हुई हो। दिलमें घुसी हुई हो। रग-रगमें पैठी हुई हो। क्योंकर तुमसे भागूं ? सोता हूं तो स्वप्नमें तुम्हीं तुम हो। जागता हूं तो ध्यानमें तुम्हीं तुम हो। क्या तुम्हीं हो जिसको मैं लेखोंमें मुद्दतोंसे ढूंढ़ रहा था। जिसकी धुनमें पागल होकर बराबर लेख लिखता आया हूँ। जरूर तुम्हीं हो; क्योंकि तुम्हारे इन दिनोंके लेखोंमें उस दिनकी झलक पायी जाती है। जिस दिन तुमने अपने भक्तको दर्शन दिया था।·····अरे ! तुम तो मुस्कुरा रही हो ! मेरे पागलपनेपर मुस्कुरा रही हो ? क्या मैं सचमुच धोखा खा गया ? सच बता दो। क्या तुम उन लेखोंकी लिखने वाली नहीं हो ? तब फिर कौन है ? इतने लाजवाब खूबसूरत और प्यारे भाव तुम ऐसी मनमोहनीमें छोड़कर और कहां हो सकते हैं ? बोलो बोलो ! क्यों मेरे खयालातको दो तरफ़ डावाँडोल कर रही हो ? कहीं तुम दोनों एक ही होती तो···वह लो तुमने तो शर्माकर सर झुका लिया। वाह ! वाह ! क्या प्यारी अदा है। क्या ग़ज़बका भोलापन है। ठहरो, ठहरो, जरा यों ही

खड़ी रहो। मैं तुम्हारी इस अदाका सरापा खींच लूँ।

(मेजके पास कुर्सीपर बैठकर लिखनेकी धुनसे सोचता हुआ नज़र आता है।)

(दौलतरामका आना)

दौलत०—(अलग) लीजिये फिर वही धुन। फिर वही स्वप्न। इस लड़केसे मैं हैरान हूं। जब देखो तब कमबख्त लेख ही लिखा करता है। ईश्वर जाने इसे इन बातोंमें क्या मिलता है।

मदन—(दौलतरामको देखकर झुँझलाता हुआ क़लम मेज़पर फेंक देता है—अलग) लो सब चौपट हुआ। लाख रुपयेकी चीज गारत कर दी।

दौलत०—क्यों बेटा! बावजूद मेरे सैकड़ोंबार मना करनेके तुमने किस्से-कहानियोंका लिखना अबतक नहीं छोड़ा?

मदन—पिताजी, अगर बुलबुल चहकना छोड़ दें। कलियाँ चटकना छोड़ दें। तो मैं भी लेख लिखना छोड़ दूँ।

दौलत०—अफसोस! तुम अपनी जिन्दगी खराब करते हो।

मदन—हां, जिन्दगी सुधारनेके लिये।

दौलत०—आकिबत बिगाड़ते हो।

मदन—आकिबत बनानेके लिये।

दौलत०—घर लुटाते हो।

मदन—नाम कमानेके लिये।

दौलत०—नाम कमानेके लिये ?

मदन—हां, नाम कमानेके लिये। नामहीके लिये लोग औलाद चाहते हैं गैरोंके लड़कोंको गोद बिठलाते हैं। ताल-कूएँ खुदवाते हैं। मन्दिर-धर्मशालाएँ बनवाते हैं। दौलत ठीकरोंकी तरह लुटाते हैं। हथेलीपर जान लिये फिरते हैं। सूलीपर चढ़ते हैं और गरजती हुई तोपोंके सामने बेधड़क चले जाते हैं।

दौलत०—और तुम क्या करते हो ?

मदन—मैं अपने नामकी बुनियाद इन सभोंसे बढ़कर उस पक्की जमीनपर डाल रहा हूँ, जहांपर यह वक्तके हमलोंको मुद्दतों बरदाश्त कर सके। क्योंकि—

"रहता सखुनसे नाम क़यामत बलक है 'ज़ौक'।
औलादसे तो यही दो पुश्त चार पुश्त ॥"

दौलत०—अरे ओ खप्ती! रात-रातभर गलियोंमें ठोकरें खानेमें अपना नाम समझता है ? बापके रुपयेके बलपर बेकारी और बाही-तबाहीमें जिन्दगी गुजारनेमें अपना नाम समझता है ?

मदन—पिताजी, अफसोस है कि इस देशमें साहित्यका

आदर नहीं। लोग यह जाननेकी तकलीफ ही नहीं करते कि साहित्यका संसार किसे कहते हैं और कैसे बनता है। यहाँके लोग कार्यसे मतलब रखते हैं, कारणको नहीं देखते। किताबका मज़ा लेते हैं, मगर लेखककी खबर नहीं लेते। शहद चाटते हैं, मगर मधु-मक्खियोंकी मिहनतका अन्दाजा नहीं करते। यही वजह है कि मेरी तमाम बातें आपको क्या बल्कि यहाँके सभी लोगोंकी नज़रोंमें जलील मालूम होती हैं। और यों मैं आवारा और निकम्मा समझा जाता हूँ।

दौलत०—अरे बेवकूफ इन्हीं खयालोंने तुझे सत्यानाश कर रखा है। इन बातोंको छोड़। अब भी सम्भल जा। कुछ दुनियाका काम कर।

मदन—दुनियाहीका काम कर रहा हूँ पिता।

दौलत०—दुनियाका काम?

मदन—बेशक।

दौलत०—क्योंकर? क्या यह काश्तकारी है कि नौकरी है या तिजारत?

मदन—पिता, यह सब तो मामूली काम है। खाली पेटकी भूख बुझाना जानते हैं। मैं वह काम करता हूँ जिससे दिमागकी भूख बुझती है। जिस देशने जानवरोंकी तरह खाली तोंद ही फुलायी और दिमागकी तरक्कीकी कोई फिक्र न की वह

देश भला कहीं तरक्की कर सकता है। जो देश तरक्की कर रहे हैं वहां देखिये दिमागको आसूदा रखनेकी कितनी कोशिशें की जाती हैं। इसको खुश करनेके लिये कितना खर्च किया जाता है। मगर यहांके लोग दिमागके लिये एक टका खर्च करना तो दूर रहा पेटके लिये भी तीन पैसे जीसे नहीं खर्च कर सकते। तरक्की क्या खाक हो ?

दौलत०—बस ! बस ! बहुत सपना देख चुका। अगर तेरे यही ख़यालात हैं तो समझ ले गली-गली ठोकरें खायेगा।

मदन—कुछ परवाह नहीं। लेखकोंका स्कूल वही है। कोई वहाँ शौक़िया जाता है और किसीको क़िस्मत ले जाती है।

दौलत०—ओ नाख़लफ़ लड़के, ज़रा आँखें खोल, कुछ नौकरी-धन्धेकी फ़िक्र कर। देख, मेरा बुढ़ापा ख़राब न कर। मेरी उम्मीदोंका खून न कर।

मदन—अय पूज्य पिता ! आप मेरी दिमाग़ी खूबियों-को ख़राब न कीजिये। मेरे हौसलेको बरबाद न कीजिये। साहित्यका खून न कीजिये।

दौलत०—ओ पागल, तुझे किस तरह समझाऊँ ? अरे बेवकूफ़ कबतक तू बापके रुपयेके बलपर अपना शौक़ जारी रखेगा ? कबतक मैं जिन्दा रहूँगा ? कबतक तुझे मैं खिला-ऊँगा ? पाल-पोसकर पढ़ा-लिखाकर इतना बड़ा कर दिया।

अब तो अपने पैरपर खड़ा हो। अगर तुझपर यह सत्यानाशी भूत सवार है तो इस कामको बेकारी और फुरसतकी घड़ीके लिये रख छोड़। अपना असली वक्त पेटके धन्धेमें लगा।

मदन—यहाँ यही तो ख़राबी है पिता। जबतक लेखक इसके पीछे अपना पूरा वक्त, क्या बल्कि अपनी सारी ज़िन्दगी न लगायेगा, तबतक न तो उसे कोई तजुरबा ही होगा और न साहित्य ही ठीक तौरसे तरक्क़ी करेगा। बेकारीमें लिखे हुए लेख महज़ बेकारोंके वक्त काटने और टुटपुँजिये अख़बारोंके पेट भरनेके लिये होते हैं।

दौलत०—मैं फिर कहता हूँ, खूब सोच ले समझ ले।

मदन—क्या करूँ ? मजबूर हूं पिता। साहित्य-सेवा छोड़ नहीं सकता।

दौलत०—तो कमबख्त, तू भी मेरे घर रह नहीं सकता। बस, हो चुका। मेरे घर अपाहिजोंका कुछ काम नहीं।

मदन—यही बात ?

दौलत०—हां, यही बात।

मदन—अच्छा, तो आशीर्वाद दीजिये कि मरते दमतक जो ख़ब्त मुझपर सवार है वह योंही बराबर सवार रहे।

(पैर छूकर जाता है)

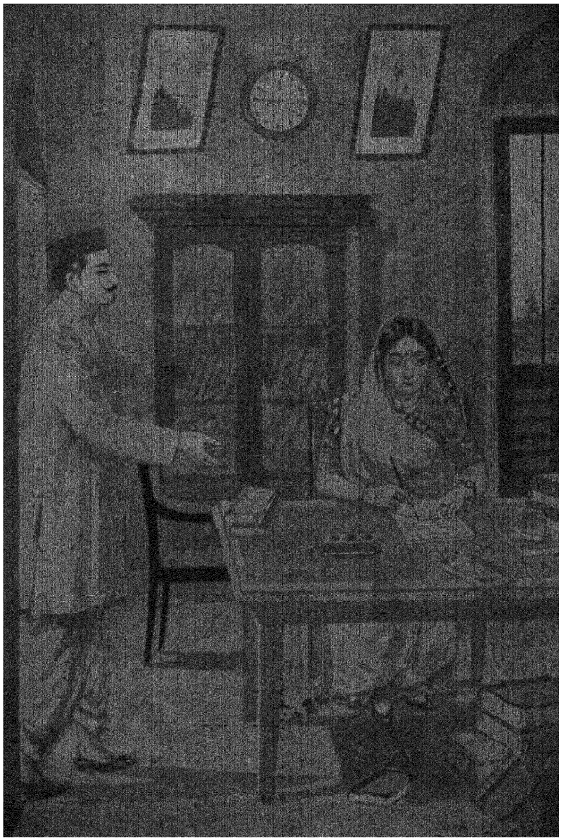

पेटू०—जानता नहीं कि अब हम सम्पादक गर्भानन्द है। [पृ० ७९

दौलत०— (अकेला) चला गया ? ओ घमण्डी पागल ! बेवकूफ आवारा ! इतना समझाया, पर तेरा सपना नहीं टूटा ? अच्छा, जा। जब भूखसे आंतें कुलबुलायंगी। कौड़ी-कौड़ीका मुहताज होगा। गली-गली ठोकरें खायेगा। तब तेरा सपना टूटेगा और लौटकर फिर तू इसी दरवाजेपर आयेगा। तभी तेरी आंखें खुलेंगी।

(दूसरी तरफ जाता है)

(पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

रास्ता

(पेटूलाल गर्भानन्द बड़ी-सी तोंद फुलाये एक तरफसे आता है। दूसरी तरफसे बण्टाधार आता है। दोनोंकी तोंदें लड़ जाती हैं।)

बण्टा०—अरे बापरे बाप तोंद फूट गयी।

पेटू०—अररर्र ! मालगाड़ी लड़ गयी।

बण्टा०—कौन चूरनवाले ? अरे यह कौन-शा रोग हो गया है तुम्हें। बदन भरमें गर्भ ही गर्भ।

पेटू०—जानते नहीं कि अब हम सम्पादक गर्भानंद हैं।

बण्टा०—हां हां, अब शमझे। तभी इतनी तोंद निकल आयी। क्यों न हो।

पेटू०—अभी क्या देखते हो? अभी तो छठा महीना है। कुछ दिनोंके बाद देखना।

बण्टा०—क्या अभी और यह बढ़ेगी ?

पेटू०—क्यों नहीं बढ़ेगी ? क्या यह तुम्हारी तरह कुछ ऐसी-वैसी तोंद है ? अरे यह पचमेल-मसालेकी बनी हुई है।

बण्टा०—कौन-कौन ?

गाना

पेटू०—दग़ाबाज़ी धोखेबाज़ी चोरी मक्कारी और लूटमार हां।
सबको मैं कूट छान करता हूँ रोज़ पान।

बण्टा०—वाह मेरे तीशमार खां।

पेटू०—सम्पादक हूँ व प्रकाशक हूँ व कवि प्रिंटर हूँ और लेखक भी
इन पचमेल मसालनकी यह तोंदकी ढोलक देखोजी।

बण्टा०—तो तुम प्रकाशक भी हो गये ?

पेटू०—देखते जाओ। मैं ब्रह्मासे कुछ कम थोड़े ही हूँ। उनके चार मुँह हैं और मेरे पांच।

बण्टा०—तभी यार तुम हमशे बाज़ी मार ले गये। पाँच पाँच मुँहशे खाना खाते हो। क्यों न बीबी तोंद फूली न शमायें।

पेटू०—और कर्मानुसार मेरे हरेक मुँहके नाम अलग अलग हैं।

बण्टा०—हाँ, ज़रा बताना तो शही, कौन कौन हैं? (अलग) ताकि हम भी कुछ शीख लें।

पेटू०—सम्पादक गर्भानन्द। गिनो एक।

बण्टा०—इशके उश्ताद तो हम ही हैं। हमहीशे तुमने इशके गुण शीखे हैं।

पेटू०—तुकबन्दलाल कवि। दो।

बण्टा०—हाँ हाँ, यह गुण तुम्हारा श्वाभाविक है। इशमें कौन शन्देह कर शकता है?

पेटू०—प्रकाशक पेटूलाल। तीन।

बण्टा०—यह नाम तो तुम्हारे बापहीने रख दिया था। परन्तु वह नहीं जानते थे कि इशके अनुशार तुम कोई काम भी ढूँढ़ निकालोगे। मगर इशमें तुमने क्या क्या करतब दिखाये हैं? (अलग) यह शीखना चाहिये।

पेटू०—सुनो जी, चौथे दग़ाबाज़राय प्रिण्टर। छापाख़ाना भी खोल दिया।

बण्टा०—वाह वाह! ताकि अपनी प्रकृतिके गुणोंका विकाश दिखला शको। क्यों है न यही बात? (अलग) यह भी शीख लेना चाहिये।

पेटू०—पाँचवें अनुवादीलाल चोर भाई ग्रन्थकार।

बण्टा०—वाह भाई! अपने ख़ानदानी गुणोंके अनुशार

यह पदवी भी ख़ूब लगायी। मगर यार, तुम ग्रन्थकार कैसे हो गये ?

पेटू०—अरे ! एक दोका नहीं, बीसियों किताबोंका ग्रन्थकार हूं।

बण्टा०—बिना पढ़े-लिखे ?

पेटू०—हाँ हाँ, तरकीब चाहिये, लिखना पढ़ना कैसा ? किताबोंपर नाम छापनेसे मतलब रखते हैं। किताब लिखनेके झंझटसे सरोकार नहीं रखते। 'दुख झेलें बी फ़ाख्ता कऊये अण्डे खायें।'

बण्टा०—यह कैसे यार ?

पेटू०—अजी हमारे बहुतसे खुशामदी टट्टू ऐसे हैं जो अपनी एक रचना प्रकाशित करानेकी खुशामदमें चार किताबें हमारे नामसे भी लिख देते हैं।

बण्टा०—बड़े उश्ताद हो। मगर कोई अपनी रचना दाम देकर खुद ही छपवावे तब तो तुम्हारी कुछ दाल न गलती होगी ?

पेटू०—वाह ! वाह ! उसकी भी तरकीब है। जैसे किसीने छपवायी १००० कापियां तो हमने चुपकेसे छापलीं ५०००। वह तो खुद बेच पायेगा नहीं। बिक्री करनेके लिये झख मारकर हमारी ही खुशामदें करेगा। तब अपनी ४००० बेंचकर

तोंद फुलवायी और उसे १००० का हिसाब समझा दिया। वह ख़ाहमख़ाह घाटा खायेगा। दुबारा ऐसी बेवक़ूफ़ी न करेगा।

बण्टा०—वाह दोश्त! तुम हमसे भी बढ़कर शाहित्यके शपूत निकले।

(एक अहीरका डण्डा लिये हुए आना)

अहीर—न जाने मोर दूनों भैंसीये कहां तुड़ायके गयीं। अब कहाँ जायीं ढूंढ़े। रतौंधी होत है। भले सूझ नाहीं पड़त है। हो लेयो! जानो समनवे दूनों ठाढ़ हैं। भले मिलि गयीं। आओ भू-ऊ-रि! (डण्डासे पेटूलाल और बण्टाधारकी तोंदपर मारता है) अरे! चल नहीं कोई कानीहउज माँ करियाये देयी। अरे भाग चल। तक! तक! तक! (पीछे दुम पकड़नेके लिये हाथ बढ़ाता है) अरे! पोछिया कवन कसाई काट लेइगा। हो लेयो सिंधियो कहूं तोड़ाय आइस। हाय दादा! (मारता है)

(पेटूलाल और बण्टाधार घबराकर भाग जाते हैं। पीछे अहीर मारता हुआ जाता है।)

(पर्दा उठता है)

तीसरा दृश्य

मोहनीका मकान

(मोहनी अपने हातेके भीतर फुलवारीमें गाती हुई नजर आती है)

गाना

मोहनी—कौन यतन करूं कोई बता दो केहि विधि राखूं धीर ।
उठत है रह रह पीर लागत जैसे तीर ।
दिन रैन है चैन नहीं है नैनसे हरदम बरसत नीर ।
"ऐ करतार बिनै सुनै 'दास' की लोकनकी अवतार करी जनि ।
लोकनकी अवतार करो तो मनुष्यनहीको संवार करो जनि ।
मानूषहूंकी संवार करो तिनै बिच प्रेम प्रचार करो जनि ।
प्रेम प्रचार करो तो दयानिधि केहु वियोग विचार करो जनि ।"

मोहनी०—(आप-ही-आप) मदन तुम भी कैसे अबोध हो ? तुम्हें स्त्रियोंके हृदयका अबतक ज्ञान नहीं ? वरना तुम अपने आखिरी लेखमें स्त्रियोंको हृदयहीन न कहते ? प्रेमकी चिनगारी पड़ते ही मर्दोंका दिल बारूदकी तरह जल उठता है और संसार तमाशा देखने लगता है । परन्तु हम-लोगोंका कण्डेकी तरह राखके ढेरके नीचे धीरे-धीरे सुल-गता है। न धुआँ उठता है और न रोशनी होती है।

फिर तुम्हें इसकी व्यथा क्योंकर दिखलाऊँ ? हमारा हृदय तो एक गुप्त रहस्य है। संसारकी रोचकताओंका मूल आश्रय है। अध्ययनका एक अति कठिन विषय है। भावोंका अथाह समुद्र है। जिसकी थाह तुम हमारी ज़बानसे लेना चाहते हो ? वह तो हमारी जन्मकी बैरिन है। वह भला कब हमारे हृदयका साथ दे सकती है ?···हृदय पहचानना तो दूर रहा तुमने अबतक मुझीको न पहचाना। तुम्हारी नज़र पड़ते ही मैंने तुम्हें भांप लिया था। वरना मेरे हाथसे किताब क्यों गिरती ? गल्पके रूपमें मैंने उस घटनाकी तरफ़ तुम्हें इशारा भी दिया था। इससे ज्यादा कोई स्त्री और क्या कहती ? मगर तुम अब भी न समझे और उल्टे रूठ गये ? मेरे लेखोंका जवाब दैनिक और साप्ताहिक पत्रोंमें देनेकी कौन कहे मासिकमें भी देना बन्द कर दिया। तुम कहते हो कि तुम्हारे लेखोंमें पहिले शोख़ी थी और अब गम्भीरता है। क्यों, इसीसे तुमने जान लिया कि मेरे दिलकी गर्मी ठण्ढी पड़ गयी और फिर कठोर होकर चुप हो गये ? बड़े नासमझ हो।···या ईश्वर ! एका-एक दिल क्यों धड़कने लगा ? अरे ! यह कौन आ रहा है ? वही वही, जिसको देखना चाहती हूं···मगर हाय ! देखा नहीं जाता, अब क्या करूँ ?

(घरके भीतर चली जाती है। फटी हुई हालतमें मदन आता

है। कुछ घड़ी बाद मोहनी अपने कोठेके झरोखेपर दिखायी देती है। मगर वह फिर खिड़कीको बन्द कर देती है और थोड़ा खोलकर झाँकती है।)

मदन—अफ़सोस! क़िसमतमें ठोकरें खाना बदा था। वही हुआ। मैंने समझा था कि अपने क़लमकी बदौलत नाम और दौलत दोनों कमाऊँगा। और यों इसी काममें दिन-रात मस्त रहूंगा। इसी इरादेसे भूखों मरकर मैंने यह नाटक लिखा। इसपर बड़ी उम्मीदें थीं मगर कुछ भी न हुआ। पुरस्कारका नाम सुनते ही सम्पादकोंने मुँह फेरा और प्रकाशकोंने दुतकारा। हायरे देश! अन्धोंके आगे रोये और अपनी आंखें खोये। इसको पबलिककी सेवामें पहुँचानेके लिये खुद छपानेपर कमर कसी और क़र्ज़ा लिया। सोचा था कि तुरन्त दिन बहुरेंगे। कौड़ी कौड़ी दे दूंगा। मगर अफ़सोस! पेटकी आगमें वह रुपये सब भस्म हो गये। और यह नाटक योंही रह गया। इसी उधेड़बुनमें लेख लिखना भी बन्द हो गया। अच्छा ही हुआ। क्योंकि अगर तू तूही है तो कहां तू महलोंकी रानी! और कहां मैं गलियोंका भिखमङ्गा! तुझसे जबान लड़ानेकी मेरी अब मजाल क्या? तुझे छेड़नेकी अब हिम्मत नहीं। तेरे लेखोंका जवाब बस चुप्पी है। मगर तेरी यादको क्या करूं? इस मुसीबतमें

भी साथ नहीं छोड़ती। तेरी एक झलक देखनेके लिये आंखें तरस रही हैं। दिल तड़प रहा है। छिपकर तुझे देखनेको रोज तेरी गली ढूंढ़ता हूं। मगर नहीं मिलती। न जाने उस दिन तुझे किस गलीमें देखा था। खयाल नहीं। अरे !···मेरे सरमें यकायक फिर चक्कर आ रहा है। अब खड़ा नहीं रहा जाता। (लड़खड़ाता है और सर पकड़कर बैठना चाहता है) तीन दिनका भूखा हूं। मारे कमजोरीके बैठा भी नहीं जाता। क्या करूं ? अरे ! अरे ! आंखोंके सामने अंधेरा छा गया। हाय !

(बेहोशीमें गिर पड़ता है)

मोहनी—(खिड़की खोलकर आप-ही-आप) अरे ! तुम सो गये ? कंकड़ोंपर ही सो गये ? और मैं अभागिन देख रही हूं ! क्या करूं, किस तरह तुम्हारी मदद करूं ? औरतोंका क्या बस ? ईश्वर ! तूने मुझे औरत क्यों बनाया ? क्यों मुझे इतनी दौलत दी और उसको खर्च करनेका अख्तियार मुझे नहीं मेरे वलीको दिया ? साहित्यके सपूत ! एक दिन वह होगा जब तुम्हें देश देवताओंसे भी बढ़कर पूजेगा। मगर आज तुम्हारी यह दशा कि भूखों मर रहे हो ! अफ़सोस ! यह तुम्हारा नहीं, देशका कुभाग्य है। तुम क्यों यहां पैदा हुए ?

चाही जो नगीना कर कीने जेवरातनमें,

सो मणि ले बसी जाय मस्तकमें कीड़ाके।
सुन्दर मुकुट मुक्ताहल झालरमें,
सो सीप लाये बसी जाय मध्य नीराके।
जैसे मृगनयनी पिकबयनी सलोनी नार,
पाले पड़े कोई पुरुष विन पीराके।
वैसे पुनि आयके कुठौर कोई जाय पड़े है,
तो वह हीरा पै बिकाने मोल खीराके।

हां, एक काम कर सकती हूं। मेरे ज़ाती खर्चके लिये जो रकम मुझे इसी महीनेमें मिली है, उसमेंसे १०००) रु० का एक नोट अभी मेरे पास बचा हुआ है, इसीको मैं चुपचाप तुम्हारे पाकेटमें रखे देती हूं। तुम्हारी दुर्दशा कुछ घड़ीके लिये मिट जायेगी। (नोट हाथमें लेकर) मगर इसको तुम्हारी जेबमें क्यों डालूं ? तुम्हारे पास जानेकी हिम्मत नहीं पड़ती। यहींसे फेंक दूं। न जाने तुम्हारी नज़र उसपर पड़े या नहीं। किसी आदमीके हाथ भेजूं ? न, यह भी नहीं। भेद खुल जायेगा। तो क्या मैं ही आऊं ? सड़कपर तो कोई नहीं है। मगर कहीं तुम ही न जग पड़ो। क्या करूं ? कुछ हो, मैं ही आती हूं। मगर ख़बरदार ! जागना मत। मेरी इस ढिठाई और निर्लज्जताको माफ करना।

(खिड़की बन्द कर देती है)

(दो कान्सटेबिलोंका आना)

पहला कान्स०—अरे ! यह कौन सड़कपर पड़ा है ? शराबी मालूम होता है। नशेमें बेहोश हो गया है।

दूसरा कान्स०—उठाओ बदमाशको। अगर कुछ मुट्ठी गर्म हो तब तो ख़ैर है ! वरना चालान करो।

पहला कान्स०—हां जी। अल्लामियाँ बड़े भलेमानुष हैं। एक न एक शिकार यारोंके लिये भेज ही देते हैं। उठ बे, सड़कपर क्यों पड़ा है ?

(बेदरदीके साथ हाथ पकड़कर बैठाता है)

मदन—(घबड़ाकर) कौन हो भाई ?

दूसरा कान्स०—शराब पीकर सड़कोंपर गिरता पड़ता है। चल थानेपर।

पहला कान्स०—नहीं तो यार लोगोंको भी पिलवाओ। वरना शराब पीकर दंगा करनेका मज़ा मिल जायेगा।

मदन०—भाई, मैं शराबी नहीं बीमार हूं। यकायक सरमें चक्कर आ गया और मैं रास्ता चलते गिर पड़ा।

(दो आदमियोंका आना)

पहला आदमी—क्या है सिपाही जी, क्या है ?

दूसरा कान्स०—शराबी है शराबी।

मदन—नहीं भाई।

पहला कान्स०—चुप बे।

दूसरा आदमी—अरे यह तो मेरा वही मकरूज़ है। इसपर तो मेरी डिगरी और वारण्ट भी है।

पहला कान्स०—लो यार, यह चोर और बेईमान भी निकला।

मदन—बेशक, मैंने जो तुम्हारा कर्ज़ खाया है, पचानेके लिये नहीं। दे दूँगा भाई। दे दूँगा।

दूसरा आदमी—हाँ हाँ, बड़े देनेवाले हैं। सोधी उँगलीसे आजतक कहीं घी निकला है? ले चलो सिपाहीजी इसे थानेपर।

दोनों कान्स०—चल बे। (मदनकी गरदनमें हाथ देकर ढकेलता है। मदनकी किताब वहीं छूट जाती है।)

मदन—अरे, मेरा नाटक—

दोनों कान्स०—चुप बदमाश। क्या फाटक फाटक बकता है? चल उधर। (जबरदस्ती मदनको ढकेलते हुए सब ले जाते हैं उसके बाद मोहनी हाथमें नोट लिये मकानसे निकलती है।)

मोहनी—अयं! चले गये? हाय! किधर गये? दरवाजेपर आकर भूखे ही लौट गये। अब मैं अभागिन क्या करूँ? (सड़कपर आकर) यह क्या है। (किताब उठाती है) अरे! यह तो तुम्हारा वही नाटक मालूम होता है। ऐसी

बेख़बरी ! इसको यहीं छोड़ गये। अच्छा हुआ मेरे हाथमें पड़ा। मैं इसको तुम्हारे लिये छपवाऊँगी और इसका आदर बढ़ाऊंगी। अरे ! उधर क्यों इतना शोर हो रहा है ? (जिधर मदन गया है उधर देखती है) एक आदमीको यह लोग मार रहे हैं। अरे ! क्यों ? हाय ! हाय ! यह तो वही हैं, वही ! या ईश्वर ! क्या करूं ? अब क्या करूं ? अरे ! क्यों क्यों क्यों उसे मारते हो चण्डालो ? मत मारो। हाय ! हाय नहीं मानते लोग। (उस तरफ जानेके लिये लपकती है। वैसे ही मकानसे मालती और सहेलियां निकल पड़ती हैं।)

मालती—अरी सखी, तुम यहाँ क्या कर रही हो ?

(मोहनी झिझककर पलट पड़ती है। और मालतीके कन्धेपर सर रखकर मुंह छिपा लेती है।)

मोहनी—कुछ नहीं।

गाना

सहेलियाँ—

ऐरी सखी ऐरी सखी कैसी भई तेरी गती हाय दई !
रह रह घबराय रही, थर थर थरराय रही।
हाँरी सखी कैसी डरी बोलो सही कुछ तो ज़री।
अँखियां छलक रहीं छतियां धड़क रही सुरत कुम्हलाय गई।

(पर्दा गिरता है)

चौथा दृश्य

लेखक बम्भोलानाथका मकान

(बम्भोलानाथका खुश खुश आना)

बम्भोला०—

अब वाह ! वा ! भाग मेरे जागे ।
दूर हुए सङ्कट अब क्लेश सारे भागे ।
रुपये कमाऊँगा नामी कहलाऊँगा ।
ऐसा एक ढङ्ग नया सूझ गया अब तो क्या है वाह वा ।
अब वाह वाह ।

बम्भोला०—अब सब सङ्कट दूर हो जायेंगे । बलासे नौकरी छूट गयी । कुछ परवाह नहीं । हज़ारों रुपयेकी अमदनीकी राह सूझ गयी । साहित्यका सुधार, नामका नाम और आमदनीकी आमदनी । बस, अब क्या चाहिये ? पौ-बारह है । ईश्वर भला करे प्रकाशक पेटूलालका, जिन्होंने मेरे ख़र्चपर मेरी पुस्तक प्रकाशित करनेका भार अपने ऊपर ले लिया । पुस्तक छपते ही मेरा नाम दुनियाके चारों कोनोंमें फैल जायगा । और मैं हमेशाके लिये अमर हो जाऊँगा ।

(गड़बड़का आना)

ओहो गड़बड़ ! बड़े मौकेसे आये। मैं तुमसे मिलनेके लिये व्याकुल था। आज मुझे बड़ी खुशी है।

गड़बड़—नौकरी छूट जानेसे ? (अलग) मैंने समझा था कि इनपर मुसीबत पड़ी है। बेचारे रोते होंगे, चलूँ ज़रा ढाढ़स बँधा आऊँ। मगर यहां तो हज़रत कलोलें कर रहे हैं।

बम्भोला०—नहीं भाई, प्रकाशक पेटूलालसे मुलाक़ात हुई थी।

गड़बड़—ओहो ! फिर कोई भूत सवार हुआ क्या ?

बम्भोला०—सुनो तो, बड़ा लायक आदमी है।

गड़बड़०—क्या कहना है। दुनियामें दो ही तो लायक़ हैं। एक वह और एक आप।

बम्भोला०—तुम तो अजीब बक्की हो। बात नहीं कहने देते। उन्होंने गर्भके बच्चोंके लिये एक ग्रन्थावली निकाली है। मुझसे कहा है कि अगर तुम भी इसके लिये कोई उपयोगी पुस्तक लिखो तो उसको मैं तुम्हारे खर्चपर सहर्ष प्रकाशित कर दूँगा।

गड़बड़—बेशक, बड़े लायक़ आदमी हैं। बेचारे साहित्यको गर्भमें ही रखना चाहते हैं।

बम्भोला०—तभी तो मैं कहता हूं कि बड़े लायक़ हैं।

नफ़ाके चार हिस्सोंमें एक हिस्सा मुझको भी देंगे। मुझको, हां मुझको।

गड़बड़—और बाक़ी तीन हिस्से ?

बम्भोला०—वह तो उनके हैई हैं।

गड़बड़—और किताब आपके खर्चपर छपेगी ?

बम्भोला०—हां, उनके यहाँका यही नियम है।

गड़बड़—तब तो उनके लायक़ होनेमें कुछ भी शक नहीं।

बम्भोला०—जिस समय उनकी कृपासे मेरी पुस्तक प्रकाशित होगी तब देखना, देश और साहित्यका कितना फ़ायदा होगा।

गड़बड़—क्यों नहीं। रद्दी क़ाग़जका दर जितना सस्ता हो उतना ही देशका फायदा है। आजकल महँगीके ज़मानेमें जो ही सस्ता हो वही अच्छा।

बम्भोला०—और बच्चोंके हाथमें साहित्यका खिलौना कितना भला मालूम होगा ?

गड़बड़—जी हां, जैसे बन्दरके हाथमें अदरक। अन्धेके आगे रोशनी। बहिरेके आगे गाना। भैंसके आगे बीन।

बम्भोला०—तुम तो ताना मारते हो।

गड़बड़—क्या करूँ ? आप लोग रातों-दिन बच्चोंहीके पीछे पड़े रहते हैं। हम लोगोंकी खबर नहीं लेते।

बम्भोला०—क्यों ? जब बच्चोंके लिये जो चीज़ फायदे-मन्द हो सकती है तो वह जवानों और बुड्ढोंके लिये भी उपयोगी होगी ।

गड़बड़—मगर पहिले तो आप मांका दूध पीते थे अब क्यों नहीं पीते ?

बम्भोला०—माँ तो मर गयी । उसका ज़िकिर क्यों करते हो ?

गड़बड—नहीं, अब भी आपका इरादा उनकी जान छोड़नेका नहीं था; क्यों जनाब ? खैर यह तो बताइए किताब छपानेके दाम कहांसे लाइयेगा ? नौकरीका अब सहारा नहीं और घरमें टका भी नहीं ।

बम्भोला०—उसकी भी तरकीब पेटूलालने सुझा दी है ।

गड़बड़—यानी ?

बम्भोला०—श्रीमतीजीके गहने बेच डालूँगा ।

गड़बड़—अररररर ! उन्हें इसकी ख़बर है या नहीं ?

बम्भोला—नहीं जी । चुपचाप उनके गहनेका बकस चुरा लाया हूं । यह देखो (अपने चादरमें बँधे हुए एक टिनके डिब्बेको खोलकर) थोड़े दिनोंमें मैं मालामाल हो जाऊँगा ! दूसरे गहने फिर खरीद लूँगा ।

गड़बड़—पेटूलाल कोई बेढब महापुरुष मालूम होते हैं ।

बम्भोला०—हाँ हाँ। अब जाता हूं उन्हींके पास। चलो; तुमको भी उनका दर्शन करा लाऊँ।

गड़बड़—माफ़ कीजिये। मुझे कुत्ते ने नहीं काटा है।

बम्भोला०—अच्छा, तो यहीं ठहरो। मैं अभी इस डिब्बे-को उन्हें देकर आता हूँ। (जाता है)

गड़बड़—बेवकूफ़को साफ़-साफ़ अक़्लमन्दीका रास्ता बताना भी बेवकूफ़ी है। मैंने तो समझा था कि हज़रतका अब दिमाग़ ठिकाने हो गया होगा। मगर यह नया गुल खिला। ख़ैर, इनके साथ कोई ऐसी चाल खेली जाय जिससे यह हमेशाके लिये सम्भल जायें।

(रामभोलीका आना)

रामभोली—(रोती हुई) अरे, भइया गड़बड़! हमलोगोंके भाग्य फूट गये। उनकी नौकरी छूट गयी।

गड़बड़—वाह! वाह! यह आप क्या कहती हैं? वह तो बड़े खुश हैं। हंसते थे, कलोलें करते थे और एक गहनेका बकस दिखाते थे।

रामभोली—गहनेका बकस?

गड़बड़—जी हाँ।

रामभोली—किसका था?

गड़बड़—मैंने समझा था कि उन गहनोंको आपहीके

लिये बनाया होगा। मगर···।

रामभोली—मगर क्या ?

गड़बड़—वह उसको अपने साथ ले गये।

रामभोली—साथ ले गये ? कहाँ ? कहाँ ?

गड़बड़—ईश्वर जाने।

रामभोली—हाय दई ! मैं भूखों मरूं और वह दूसरोंको गहना गढ़ाकर दें।

गड़बड़—शायद ऐसा ही हो।

रामभोली—ऐसा ही हो कि ऐसा हैई है। पहिले खत भेजा जाता था। घरमें दिल नहीं लगता था। रात रातभर बाहर घूमते थे और अब गहने भेजते हैं। अरे भंगिनकी बेटी, तेरा सत्यानाश हो।

गड़बड़—हां हां, अब समझा उस दिनकी बात। ठीक है, तभी यह हाल है। मगर आपके गहनोंका बकस कहाँ है ?

रामभोली—मेरे गहनोंका बकस कहां है ? क्या वह मेरा ही था ?

गड़बड़—क्या मालूम, टीनका छोटासा गोल-गोल था।

रामभोली—हाय ! लुट गयी ! लुट गयी ! वह तो मेरा ही था। जाकर देखूं तो सही। हाय लूट लिया—

(जाती है)

गड़बड़—हां, अब ठीक है। इधर मसाला तैयार हो गया। अब जाकर और शिकार ढूंढू तब गड़बड़ाध्याय शुरू हो!

(जाता है)

(पर्दा उठता है)

पांचवां दृश्य

दिलजलाका मकान

(दिलजलाका चारपाईपर लेटे हुए गुड़गुड़ी पीते हुए सोचमें नजर आना)

दिल०—अपनी औरतसे मुझे अब नफ़रत हो गयी। सूरततक देखना मुझे नागवार है। कम्बख्तने घरको एकदम नरककुण्ड बना डाला है। रात-दिन जली-कटी बातें सुनते-सुनते कलेजा पक गया। इस प्रेमके भिखारीने उसके पैरोंपर अपना कोमल दिल न्योछावर किया था। मगर उस मरदा-नियतकी मतवालीने ठोकर मारकर उसे दूर फेंक दिया। चलो, दिलने भी अब अपना रास्ता दूसरा ढूंढ़ निकाला। न अब उसकी बातोंका कुछ असर होता है और न उस कम्बख्तकी मुझे रत्तीभर परवाह है।

(सत्यानाशीका आना)

मरदानी औरत

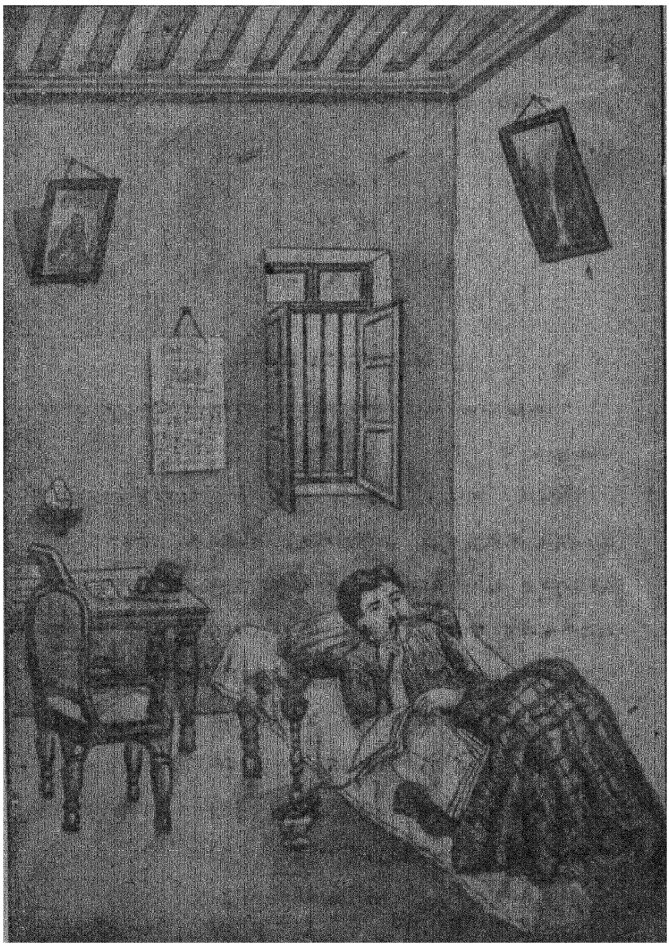

इस प्रेमके भिखारीने उसके पैरोंपर अपना कोमल दिल न्योछावर किया था। मगर उस मरदानियतकी मतवालीने ठोकर मारकर उसे

सत्या०—क्यों जी, तुम यहां पड़े आराम कर रहे हो ?

दिल०—और नहीं तो क्या करूं ?

सत्या०—तुमसे मैंने क्या कहा था ?

दिल०—क्या कहा था ?

सत्या०—इतनी जल्दी भूल गये ?

दिल०—भूल गये होंगे।

सत्या०—मेरी बातोंका तुम कुछ भी खयाल नहीं रखते ?

दिल०—न रखते होंगे।

सत्या०—क्यों ? न रखनेकी वजह ?

दिल०—तुम्हारी बात इसी क़ाबिल होगी।

सत्या०—क्यों ? ऐसी लापरवाही ?

दिल०—ताली एक हाथसे नहीं बजती।

सत्या०—इसके क्या मानी ?

दिल०—बीबी साहबा, ज्यादा दिमाग न चाटिये। जाइये, अपना काम देखिये।

सत्या०—अब यह बातें ?

दिल०—जी हां, यही बातें।

सत्या०—तो मालूम होता है, तुमने वह लेख लिखवाकर नहीं भेजा था।

दिल०—नहीं, लेख तो मैंने जरूर भेज दिया था।

सत्या०—अगर भेजते तो अबतक छपकर न आ जाता ? सालभर तो इन्तजार करते-करते हो चुका।

दिल०—आजकलके मासिक पत्रोंका यही हाल है कि साल-सालभरपर प्रकाशित हों तो मैं क्या करूं ?

सत्या०—झूठे हो। तुम्हारी इन दिनोंकी रंगत देखकर मुझे अब विश्वास हो गया कि तुमने उस वक्त भी मेरी बातका कुछ भी न खयाल किया होगा और योंही मुझसे आकर झूठमूठ कह दिया कि लेख भेज दिया।

दिल०—नहीं बीवी साहबा ! उस वक्त बात और थी। तब मैं जोरूका गुलाम था। तुम्हें खुश रखनेके लिये तुम्हारे इशारोंपर चलता था। मगर जब हर तरहसे हार गया, तुमने मेरी कुत्तेके बराबर भी कद्र नहीं की, तो तबियत आपसे आप खट्टी हो गयी। और दिलमें मुहब्बतके बदले लापरवाही समा गयी।

सत्या०—कसम खाके कहते हो कि लेख तुमने भेज दिया था?

दिल०—हां हां हां।

सत्या०—किससे लिखवाया था ?

दिल०—(अलग) लिखा तो खुद ही था, मगर बम्भोला-नाथकी सलाहसे। शायद इसीलिये न छपा हो। अब क्या जवाब दूँ ?

सत्या०—क्यों नहीं जवाब देते।

दिल०—कै दफे कहूं ? बता तो दिया कि लेखक बम्भोलानाथसे लिखवाया था।

सत्या०—अगर यह बात सच है तो बम्भोलानाथसे मुझसे मुकाबला क्यों नहीं करा देते ?

दिल०—मैं यह काम नहीं करता।

सत्या०—अच्छा तो मैं खुद उनका पता लगा लूंगी। वह रहते कहां हैं ?

दिल०—(मुँह फेरकर) भाड़में।

सत्या०—मैं अभी जाकर बम्भोलानाथका मकान ढूँढ़ निकालती हूँ और तुम्हारी सचाई और झुठाईका इम्तहान लेती हूं। यह न समझना कि मैं औरत हूं। मैं मर्दोंके कान काटती हूँ।

(जाती है)

दिल०—चूल्हेमें जाओ। परवाह नहीं, हाँ नहीं तो क्या।

(फिर लेटकर हुक्का पीता है, सुखिया घड़ा लेकर आती है)

दिल०—देखना, कहीं कमर न लचक जाये।

(सुखिया अंजुलीमें पानी लेकर दिलजलापर छींटा मारती है)

दिल०—अरे बड़ी पाजी हो तुम।

सुखिया—और तुम किससे कम हो ?

दिल०--अच्छा, जाओ जाओ, घड़ा रखके जरा एक पान बना लाओ। अपने ही हाथसे बनाना।

सुखिया--ओहो ! बड़े पान खानेवाले। अब तो बिना पानके एक सायत रहा ही नहीं जाता।

दिल०--क्या करूं ? तुम्हारे पानमें कुछ ऐसाही मजा है।

सुखिया--लो, रहने दो। बहुत न बनो।

(जाती है)

दिल०--इसकी शेखी तो दिनोंदिन बढ़ती ही जाती है। पहिले इसकी तरफ निगाह उठाकर देखनेको जी नहीं चाहता था, मगर अब बिना इसको देखे हुए चैन ही नहीं पड़ती। जहां सामने आयी दिलमें गुदगुदी-सी पैदा होती है। इस घरमें इस जलते हुए दिलको बस इसीसे छेड़खानी करनेमें जरा ठंढक मालूम होती है।

(सुखियाका आना)

दिल०—ओ हो ! ओढ़नी बदल आयी ?

सुखिया—लो, पान लो, ओढ़नी न निहारो।

दिल०—क्यों ? क्या अपनी आँखें फोड़ लूं ?

सुखिया—बस बस, मालूम हुआ। पान न खाओगे। जाती हूँ।

दिल०—(उठकर) अरे ! सुनो ! सुनो !

सुखिया—अच्छा तो हाथ फैलाओ। यहींसे फेंकती हूं मैं।

दिल०—वाह! वाह! जरा नज़दीक चली आओगी तो क्या तुम्हें खा जाऊँगा?

सुखिया—भई! लेना हो तो लो। देर होती है कि नहीं बहूजी देख लेंगी तो बस—

दिल०—क्या वह गयी नहीं अभी?

सुखिया—नहीं, अभी साड़ी पहन रही हैं।

दिल०—अच्छा दे, मैं ही आता हूँ।

(ज्यों-ज्यों दिलजला आगे बढ़ता है त्यों-त्यों सुखिया मुस्कुराती हुई पीछे हटती है।)

गाना

दिल०—बतियां सुनो छतियां लगो हटो न मेरी जानी।
मनमें बसो तनमें रहो दिल कि मेरी रानी॥

सुखिया—चलो भी हटो दूर रहो करो जि मेहरबानी।
नजर मेहर करमकी, राखो उधर हमको गरज नाहीं।

(सुखिया अन्तमें खुद पान खा लेती है और अंगूठा दिखाकर चल देती है, उसीके पीछे दिलजला भी जाता है। सत्यानाशी दूसरी तरफ झांकती हुई दिखायी देती है।)

सत्या०—अयँ! यह बातें! समझी रुखाईकी वजह, अब समझी। अच्छा, अभी लौटकर आती हूँ तो इसका

मजा चखाती हूँ।

(जाती है)

(पर्दा गिरता है)

छठा दृश्य

बम्भोलानाथका मकान

(रामभोलीका रोती हुई आना)

रामभोली—हाय ! मेरे गहने ! हाय ! मेरे गहने ! प्राणके समान जिनको मैंने जुगाके रखा था। उनको वह सब उठा ले गये। एक लोहेका छल्लातक नहीं छोड़ा। उस कसबिन हत्यारिनकी मांग जरे। उसका सत्यानाश हो जाये। जिसने मेरे मर्दको फुसला लिया और मेरे बदनके गहने उतरवा लिये। उस निगोड़ी छिनालको देखभर पाऊँ तो कच्चा ही चबा ऊँ। हे दुर्गादेवी, उस भङ्गिनियांको जप लें।

(बम्भोलानाथका आना)

(बम्भोलानाथसे)—मेरे गहने कहाँ हैं ? कहां हैं, मेरे गहने ? अरे बोलो बोलो। मेरे गहने क्या किये ?

बम्भोला०—तुम्हारे गहने ?

रामभोली—अरे हाँ हाँ हाँ मेरे गहने ? कहां हैं ?

बम्भोला०—तुम्हारे गहने कहां हैं ?

रामभोली—मेरी बातोंको मत दुहराओ। मुझे बातोंमें मत फुसलाओ। मेरे गहने कहां हैं, बतलाओ।

बम्भोला०—बकसमें होंगे।

रामभोली—तो चलकर दिखलाओ।

बम्भोला०—(अलग) अब मुश्किल हुई।

राम०—चलो चलो। (हाथ पकड़कर खींचती हुई ले जाती है)

(गड़बड़का आना)

गड़बड़—ईश्वर शकरखोरेको शकर ही देता है। रास्ते-हीमें एक मोटा शिकार फंस गया। बिलकुल उल्लूका पट्ठा है। वह चला आ रहा है।

(बण्टाधारका आना)

बण्टा०—क्यों,—बाईजीका यही मकान है ?

गड़बड़—जी हजूर ! अरे ! रमचोरवा ! ओ रमचोरवा !

(रमचोरवाका आना)

रमचोरवा—का होय हो ? अवते आवत मूड़ेपर असमान उठाय लेत हैं। भीतर अलगे कुहराम मचा है। बाहर ई जान खाये आये हैं।

गड़बड़—अबे चुप, देखता नहीं। राजा साहब आये हैं। चल कुर्सी ला।

रमचोरवा—अरे ई धौकल राजा साहब होयं ?

गड़बड़—हां। मगर तमीजसे बातें कर।

रमचोरवा—तब्बे घौलर बान्दर अस हैं। मुलाई गदहा अस तो फूला हैं कसस कुरसिया मां धसियें ?

गड़बड़—चुप, कुर्सी लाता है कि दलील करता है ?

रमचोरवा—अच्छा, तू जानो भाई।

(रमचोरवा जाता है)

गड़बड़—देहाती नौकर बड़े बदतमीज होते हैं।

बण्टा०—शत्य है ! हिन्दू नौकर शब ऐशे ही होते हैं।

(रमचोरवा कुर्सी लाता है उसपर बण्टाधार मोछे ऐंठता हुआ बैठना चाहता है)

रमचोरवा—(कुर्सी पीछेसे खींचकर) तनी रुको हो। देख लेई मजबूत है कि नाहीं।

(कुर्सी हटाकर उसपर खुद बैठता है और बण्टाधार धड़ामसे गिरता है)

रमचोरवा—भले कुरसिया खींच लीन। नहीं एतिक बड़ा लहास कुरसिया चुरमुरा जात।

गड़बड़—अबे उठ कुर्सीपरसे बदतमीज। उठा इनको।

रमचोरवा—भले तो पड़ा हैं। पड़ा रहे देयो कुरसिया तोड़इहो जान पड़त है।

(बण्टाधारको गड़बड़ उठाकर कुर्सीपर बैठाता है)

बण्टा०—राम ! राम ! शब बना शृंगार बिगड़ गया। (खड़ा होकर) तनिक पीठकी धूल झाड़ दो।

गड़बड़—झाड़ दे रमचोरवा।

(रमचोरवा दो-तीन हाथ कस-कसके लगाता है)

बण्टा०—अरे ! अरे ! अरे ! ऐशे नहीं।

रमचोरवा—हाथेसे न ठिकाई सरकार। रुको डण्डा ले आइत है। मोट कथरी डण्डेसे झाड़त बनत है।

बण्टा०—नहीं नहीं। बश बश बश।

गड़बड़—अच्छा, जाता हूँ, बाईजीको इत्तला कर आऊं कि आप आये हैं।

बण्टा०—हाँ, मगर क्या शचमुच वे मुझपर मोहित हैं ?

गड़बड़—जी-जानसे मर रही हैं। खाना-पीना छोड़े हैं उसी दिनसे जिस दिन गाड़ीपर सैर करनेके लिये पार्क गयी थीं और आपको देखा था।

बण्टा०—क्यों नहीं। क्यों नहीं। कुछ हमारा श्वरूप ही ऐशा है। हां, और शचमुच लाखों रुपयेकी जायदाद है ?

गड़बड़—बस, अब सब अपना ही समझिये। मर्द तो हैई नहीं उनके। लड़कपनहीमें मर गया।

बण्टा०—तो हम शादी भी कर लेंगे। और बड़ी शुन्दर हैं न ?

गड़बड़—लाख-दो लाखमें एक हैं।

बण्टा०—और उन्होंने ही मुझको बुलवाया है ?

गड़बड़—और नहीं तो क्या ? मुझे क्या ग़रज़ पड़ी थी ? अच्छा, अभी आता हूं।

रमचोरवा—(गड़बड़से) अरे ई का बात है हो ?

गड़बड़—चुप। (उसके कानमें कुछ कहता हुआ अपने साथ ले जाता है)

बण्टा०—वाह रे भाग्य। एक स्त्रीकी आवश्यकता थी। वह भी मिल गयी और मालदार। क्या कहना है।

गाना

बण्टा०—धन धन यह भाग मेरे,
आज मिली क्या ही अलबेली नवेली नार।
कलि दिलकी खिली, मेरी आशा फली।
आई आई जवानीमें मेरी बहार।

(बम्भोलानाथका भीतरसे आना)

बम्भोला०—(जिधरसे आता है उसी तरफ घूमकर) अरे कोई चोर ले गया होगा। फिर बन जायँगे। रोती काहेको हो ? ऐसे ही रोना है तो जी भरके रोवो, मैं क्या करूँ ? (घूमकर बण्टाधारसे) तुम कौन हो जी ?

बण्टा०—हम-हम-वह हैं। क्या नामके बड़े भारी आदमी।

बम्भोला०—तो इस घरमें क्या करने आये ?

बण्टा०—बाईजीने बुलाया है।

बम्भोला०—कौन बाईजी ?

बण्टा०—इस घरकी मालकिन।

बम्भोला०—क्यों ?

बण्टा०—हमारा स्वरूप नहीं देखते हो ?

बम्भोला०—देखते तो हैं बन्दरसा है।

बण्टा०—चुप ! हमपर वह मोहित हो गयी हैं।

बम्भोला०—चुप ! क्या बकते हो वाहियात।

बण्टा०—शच कहता हूँ। तुम्हारे शरीरकी कशम हमशे शादी करेंगी वह।

बम्भोला०—जाते हो यहाँसे कि दूँ घूँसा कसके तोंद फूट जाये।

बण्टा०—हम नहीं जायँगे जी। क्या करोगे तुम ?

बम्भोला०—चल यहांसे पाजी बदमाश कहींका। (घूँसा उठाता है—बण्टाधार धीरे-धीरे खसकता है) एकसे एक पाजी दुनियामें भरे हैं। मेरे तो योंही नाकमें दम था। यह कम्बख्त कहांसे जलेपर निमक छिड़कने आ गया ?

(दूसरी तरफ जाता है। और भीतरसे गड़बड़ निकलता है)

गड़बड़—अरे ! कोई नहीं ? शिकार चला गया। मुठ-

भेड़ नहीं हुई। च ! च ! च ! सब मामला किरकिरा हो गया।

(रामभोलीका आना)

रामभोली—क्यों गड़बड़, अब बताओ क्या करूँ ?

गड़बड़—मेरी खुद समझमें नहीं आता।

रामभोली—अरे ! वह सामने कौन औरत बनी-ठनी चली आती है।

गड़बड़—इसी तरफ आ रही है मालूम होता है। बम्भोलानाथहीकी खोजमें है।

रामभोली—तब तो वह भंगिनियां होगी। और कौन हो सकती है भला ?

गड़बड़—मुमकिन है।

रामभोली—अच्छा आने दो। झाड़ूसे बात करूँगी। बलासे नहाना पड़े। मगर आज इसकी हड्डी-पसली गढ़के रख दूंगी। जरा डण्डा ले आऊँ। (भीतर जाती है)

गड़बड़—यह औरत कहीं यहीं न आ जाये। सचमुच वह बम्भोलानाथहीका मकान पूछ रही है। या ईश्वर, खैर कर।

(बण्टाधारका आना)

बण्टा०—वाह भाई वाह ! हमको यहां बैठाल गये। क्या बतायें। घरके भीतरसे एक आदमी निकला और हमको गाली देकर यहांसे भगा दिया।

गड़बड़—बस इतनेहीमें आप घबड़ा गये ? तो कर चुके आप आशक़ी। अरे दिया होता कसके उसके मुँहपर चांटा, वह ठीक हो जाता।

बण्टा०—वह कौन था आखिर ?

गड़बड़—बाईजीके नौकरोंमेंसे कोई होगा। बड़े पाजी हैं यह सब।

बण्टा०—धततेरीकी। चूक गये।

गड़बड़—देखिये, बाईजीने यह पाँच रुपये दिये हैं और कहा है कि जलपान उम्दा लाकर खूब खातिर करो। आप इतमीनानसे बैठिये। कोई बोले तो जूतोंसे बात कीजिये। मैं ज़रा पूछ आऊँ कि क्या क्या लाऊँ।

(भीतर जाता है)

बण्टा०—पाँच रुपये ! बाप रे बाप ! हमारे खाली जल-पानके लिये ? अवश्य मोहित हैं। हमारा स्वरूप ही ऐशा है।

(बम्भोलानाथका बाहरसे आना)

बम्भोला०—क्यों जी, तुम फिर यहाँ आये ?

बण्टा०—(जूता निकालकर बम्भोलानाथको मारकर) क्यों बचा, अब ठीक हुए।

बम्भोला०—अयँ ? यह क्या ? अच्छा ठहरो।

(दौड़कर भीतर जाता है)

बण्टा०—भागा। दुम दबाकर भागा। बिना मार खाये नौकर ठीक नहीं रहते हैं।

(बम्भोलानाथ एक बड़ासा डण्डा लेकर निकलता है। और बण्टाधारको ठोकना शुरू करता है। बाहरसे सत्यानाशी आती है। वैसे ही डण्डा लेकर भीतरसे रामभोली निकलती है। और सत्यानाशीको मारने लगती है, गड़बड़ आता है और बीचमें खड़ा तमाशा देखता है।)

गाना

बम्भोला०—(बण्टाधारसे) ओ पाजी तू पापी है कामी है तू।
रामभोली—(सत्यानाशीसे) आवारा बदकारा मक्कारा है तू।
गड़बड़—हांजी हांजी हां।
बम्भोला०+राम०—ठहर ठहर ओ बेशऊर, भाग मत तू दूर दूर,
कर दूं तेरी हड्डी चूर, खूब चूर खूब चूर।
गड़बड़—हांजी हांजी हां।

तृतीय अङ्क

पहला दृश्य

(नाटक-भवन। साइनबोर्डपर अङ्गरेजी हिन्दी उर्दूके मोटे मोटे अक्षरोंमें "मदनका अनमोल नाटक साहित्य-गौरव" लिखा है। पर्देमें मोटरकार और गाड़ियोंके चित्र बने हैं। दर्शक झुण्डके झुण्ड आ रहे हैं और टिकट लेकर भीतर जाते हैं। बैंड बज रहा है। सोडा लेमुनेट चाह-पानकी दूकानें लगी हैं। एक मोटरकारपर मोहनी और मालती आती हैं।)

मालती—मेरी प्यारी मोहनी! दिलके रंजको दूर करनेके लिये; चित्तको शान्त करनेके लिये; दिमागमें खुशी और ताजगी लानेके लिये; गाना-बजाना, साहित्य, चित्र, खेल-तमाशा और सीनरी हैं। और यह सब बातें अच्छे नाटकके तमाशेमें इकट्ठी मौजूद होती हैं। इसीलिये आज तुम्हें मैं इस नाटकको देखनेके लिये ले आयी हूं कि तुम्हारा किसी तरह जी बहले। न जाने आजकल तुम्हें क्या हो गया है।

दिनबदिन तुम्हारी हालत खराब होती जाती है। जब देखो तब आहें भरती हो। सोचमें डूबी रहती हो।

मोहनी—मुझे खुद नहीं मालूम कि मेरी तबियत क्यों इतनी मुर्दा हो गयी है। किसी चीजमें जी नहीं लगता सखी!

मालती—मगर इस तमाशेमें तुम्हारा जी लगेगा। क्योंकि अव्वल तो यह सबसे बड़ी और मशहूर कम्पनी है। दूसरे, आजका तमाशा बिल्कुल नया, अनूठा और आलादर्जेका है। इस तमाशेकी तारीफ़ आजकल अख़बारोंमें बेहिसाब छप रही है। यह कम्पनी खास इसी तमाशेकी बदौलत लाखों रुपये पैदा कर चुकी है। जिन जिन शहरोंमें इसने इसका तमाशा खेला है वहाँ टिकटके दाम दूने और चौगुने करने-पर भी टिकटकी बिक्री अन्तमें बन्द कर दी जाती थी।

मोहनी—देखूं इस शहरमें कैसी इसकी क़दर होती है।

मालती—देखती नहीं, झुण्डके झुण्ड आदमी आ रहे हैं?

मोहनी—हाँ, देख रही हूँ। (मालती इधर-उधर देखती हुई ज़रा दूर खसक जाती है) मगर जिसको मैं देखना चाहती हूं वह क्यों नहीं आया अबतक? यकायक क्या वह संसारसे उठ गया? अख़बारोंमें उसके तमाशेकी धूम मची हुई है। क्या उसके कानोंतक इसकी ख़बर नहीं पहुँची? यह वही नाटकका तमाशा है जिसको वह मेरी गलीमें छोड़ गया था।

और ताज्जुब है कि वह अपनी खोयी हुई चीज़को देखनेतक नहीं आया।

(मालती पलट आती है)

मालती—सखी, ग़ज़ब हो गया। आरचेस्ट्रामें कोई जगह खाली नहीं है। लोग वापस जा रहे हैं। चौगुने दामपर भी टिकट अब नहीं मिलता।

मोहनी—कोई हर्ज नहीं। मेरे पास आधे दर्जन पास हैं, उनकी जगहें रिज़र्व्ड हैं।

मालती—तुम्हारे पास पास हैं। यह कैसे ?

मोहनी—अरी सखी ! यह तमाशा कम्पनीको मेरे ही ज़रियेसे मिला है। मैंने इसके खेलनेकी इजाज़त कुछ शर्तोंपर दे रखी है। कम्पनीने यहाँ आनेसे पहिले ही हम लोगोंको हर तमाशेको देखनेके लिये निमन्त्रण और पास भेज दिये थे।

मालती—मगर यह कैसे अचरजकी बात है ?

(घण्टी बजती है) अरे ! घण्टी बज गयी, तमाशा शुरू हो गया, चलो चलो वहीं पूछ लूंगी।

मोहनी—(मुड़मुड़कर देखती हुई) चलती हूँ। जल्दी क्यों कर रही हो ?

(दोनोंका थियेटरहालमें जाना और टिकट बेचनेवालेका बाहर आकर सिगरेट पीना)

टिकट०—चलो, आज जाओ सब लोग। अब टिकट नहीं मिलेगा।

(गड़बड़का तेजीके साथ आना)

गड़बड़—अरे! देर हो गयी! जनाब, एक दूसरे दर्जे-का टिकट दे दीजिये।

टिकट०—अफ़सोस! किसी दर्जेमें खड़े होनेतककी गुञ्जाइश नहीं।

गड़बड़—जिस तरह मुमकिन हो। जो खर्च पड़े मुझे इस तमाशेको दिखलाइये। इसकी बड़ी तारीफ़ सुन चुका हूं।

टिकट०—एक तरकीब हो सकती है। एक कोनेमें एक तिपाई रखवा सकता हूं। मगर उसके लिये दस रुपये पड़ेंगे।

गड़बड़—कुछ परवाह नहीं। (टिकट बेचनेवाला भीतर जाता है) दिमागकी बेचैनी दूर करनेके लिये इसकी असली खुशी हासिल करनेके लिये योगियोंने जप-तप करके अपने शरीरतक गला दिये। विदेशियोंने माल-खजाने लुटा दिये, तो क्या मैं इसके लिये दस रुपये भी नहीं खर्च कर सकता हूँ?

(समालोचक पक्षपातीलाल मूर्खानन्दका मुंह सिकोड़े हुए आना। हुलिया-कुरूप काना बदन लकवा मारे।)

गड़बड़—धत् तेरी मनहूसकी! कहाँसे सामने आ गया। अब नाउम्मेदी नजर आती है। मगर वाह! वाह! यह

भचक देखिये। एक एक कदमपर सारा बदन छिहत्तर बल खाता है।

(टिकट बेचनेवालेका आना और पक्षपातीलालसे टकराना-पक्षपातीलालका गिरना और सबका हंसना)

पक्ष०—बड़े बेहूदे हो जी। देखके नहीं चलते।

गड़बड़—लँगड़े-लूले तो खुद हो। बदन काबूमें नहीं। और चलते हो बीच रास्तेमें। वह क्या करें ?

टिकट०—साहब, मालिकने नामंजूर कर दिया (घड़ी देखकर) अब तो तमाशा खातमेपर है। कल्ह देख लीजियेगा। अभी तो यह कई दफे होगा।

गड़बड़—खैर ! मुझे पहिले ही मालूम हो गया था।

पक्ष०—(उठकर) क्यों जी, तुम नहीं जानते हम कौन हैं ? हम हैं पक्षपातीलाल समालोचक। हम इसकी कसर अखबारोंमें निकाल लेंगे।

टिकट०—चलो चलो, तुम्हारे ऐसे कौए कायँ कायँ किया ही करते हैं। इसकी परवाह कौन करता है ?

गड़बड़—क्यों जनाब, क्या आप समालोचक हैं ?

टिकट०—सूरत और ढांचा नहीं देखते ?

गड़बड़—हाँ, देखता तो हूं. दुनियाभरके ऐबोंसे भरे मालूम होते हैं।

पत्त०—(चिढ़कर) तभी तो समालोचक हुए जी। जब-तक अपनेमें ऐब न होंगे दूसरोंमें क्या खाक ऐब निकालेंगे ?

गड़बड़—शाबाश ! आप ऐब ही ऐब देखते हैं और गुण ?

टिकट०—गुण कैसे दिखायी पड़े ? गुण देखनेवाली आंख तो फोड़वा डाली। ऐबवाली रख छोड़ी है। देखते नहीं।

गड़बड़—और यह चाल आपकी पैदायशी है ?

टिकट०—मैं बताऊं। खाली पक्षपातकी हवामें ऐंठ गई है। और हज़रत बहिरे भी होंगे। चाहे पूछ कर देख लीजिये।

पत्त०—अच्छा हैं, तो तुम्हारे बापका क्या ? इस नाटककी घज्जियां न उड़ा दूं तो मैं समालोचक नहीं। इसीमें कुशल है हमें मुफ़्त तमाशा दिखा दो।

(पेटूलाल, बण्टाधार और भिखारीलालका आना)

पेटू०—मुफ़्त तमाशा तो हम भी देखेंगे, क्योंकि हम हैं प्रकाशक।

बण्टा०—और हम हैं शम्पादक। हमको तो मुफ़्त तमाशा देखना ही चाहिये।

भिखारी०—और हम भी मुफ्त तमाशा देखनेवाले हैं। क्योंकि हम हैं भिखारीलाल मन्त्री पुस्तकालय।

गड़बड़—वाह ! वाह ! अच्छे मुफ्तखोरे जमा हैं।

टिकट०—हां जनाब, आप लोगोंको मुफ्त तमाशा देखनेका कौनसा हक़ है ?

गड़बड़—हक़ कुछ भी नहीं मगर अख्तयार तो है।

पत्त०—बेशक। क्योंकि साहित्यकी नकेल हमारे हाथमें है। जिधर चाहें उधर इसको मोड़ दें।

टिकट०—यह कहिये, कोचवान हैं आप।

पेटू०—और साहित्यको सजाकर निकालना हम प्रकाशकोंका काम है।

टिकट०—ओहो ! समझ गया साईस हैं आप।

बण्टा०—और हम शम्पादक लोग शाहित्यका भोजन हर जगहशे ढूंढ़कर एकत्रित करते हैं।

टिकट०—तो साफ साफ क्यों नहीं कहते कि घसियारे हैं ?

भिखारी०—और हमारे यहां साहित्य रखा जाता है।

टिकट०—लीजिये, अस्तबलकी कमी थी वह इन्होंने पूरी कर दी। चलो चलो, ऐसे असियारों-घसियारोंके लिये हमारा तमाशा नहीं है।

चारों—वाह ! हम लेखकोंसे मुफ्त किताबें लेते हैं तो हम तमाशा क्यों न मुफ्तमें देखें ?

टिकट०—ए, ज्यादे दंगा करोगे तो अभी मालिकको बुला लायेंगे और यहांसे खड़े-खड़े निकलवा देंगे।

चारों—जाओ जाओ बुला लाओ। हम बिना तमाशा देखे टलनेके नहीं।

(टिकट बेचनेवाला गुस्सेमें जाता है)

गड़बड़—दुनिया भी कैसी तमाशेकी जगह है। देखनेवाला चाहिये। जहां जरा खड़ा हो जाये वहीं तमाशा देखे।

बण्टा०—अख्खा! आप हैं महाशय जी?

गड़बड़—कौन आप हैं? माफ कीजियेगा। आपने तो सर भी लपेट रखा है और चाल भी बदल रखी है। पहचानता क्यों कर?

बण्टा०—यह शब आपकी बाईजीकी बदौलत। दो महीने तो अस्पतालमें पड़े रहे।

गड़बड़—फिर न चलियेगा वहाँ?

बण्टा०—क्षमा करो। एक टांग बची है। इश दफे वह भी न बचेगी। हमारे भाग्यमें कोई स्त्री लिखी नहीं है। स्त्री कहांशे मिले?

पेटू०—और हमको देखो। हमको घर बैठे एक परी मिल गयी।

बण्टा०—कैशे यार?

पेटू०—हमको एक दिन रास्तेमें एक औरत अकेली मिली। बस उसीके पीछे हो लिये। वह एक गलीमें घुसी और

एकदम ग़ायब हो गयी। हम वहीं घण्टों चक्कर लगाते रहे। कुछ पता न चला। जब लौटने लगे तब यकायक बदहवास रोती-चिल्लाती, खूनसे लतपत भागती हुई, वही हमारे सामने आ पड़ी। फिर क्या था। चट अस्पताल पहुँचानेका बहाना कर अपने घरमें ले जाकर उसे बन्द कर दिया और अबतक बन्द किये हुए हैं।

गड़बड़—बन्द किये हो ? क्यों ?

पेटू०—क्योंकि वह रज़ामन्दीसे नहीं रहती। अभी हमसे भड़कती है।

गड़बड़—क्या वह परायी औरत है, तुम्हारी नहीं है ?

पेटू०—मगर अब तो अपनी बनानेकी कोशिशमें हूं।

(सेठ नाटकचन्द मालिक कम्पनी और टिकट बेचनेवालेका आना)

सेठ—क्यों जनाब, आपलोग क्यों गोलमाल कर रहे हैं ?

चारों—हम लोगोंको मुफ़्त तमाशा दिखाइये। हम साहित्यकी उन्नति करनेवाले हैं।

सेठ—अच्छे मिले। लाख-लाख रुपये ख़र्च करके हम एक एक तमाशा तय्यार करें और उसको मुफ़्त दिखाते फिरें।

चारों—लाख रुपये ! किस तरह ? किस तरह ?

सेठ—आप लोगोंने कभी कम्पनी खोली होती तो जानते। हज़ारों रुपये पर्दे बनवानेमें ख़र्च करते हैं। हज़ार-हज़ार रुपये

माहवारतकके ऐक्टर रखते हैं। पांच-पांच सौ रुपये एक-एक बाजा बजानेवालेको देते हैं। हज़ारों रुपये नाटक लिखनेवालोंको देते हैं।

चारों—ऐं! ऐं! हज़ारों रुपये नाटक लिखनेवालोंको? ऐं? इतना रुपया उनको देनेकी क्या ज़रूरत?

सेठ—जिनकी बदौलत हम लाखों रुपये कमायें उनको हमसे दस-बीस हजार रुपये भी न मिलें। अजी जनाब? इस नाटकके लिखनेवालेको कुछ ही दिनोंमें एक लाख रुपये देनेका इरादा कर रहा हूं।

चारों—एक लाख! बाप रे बाप! एक लाख!

सेठ—हाँ जनाब। क्योंकि जिनकी बदौलत कम्पनीको यह तमाशा मिला है, उन्होंने लेखकको नाटककी नक़द कीमत देनेके बदले मुनाफेमें एक हिस्सा क़रार करा लिया है। इसके बमौजिब उसका हिस्सा इस वक्ततक पचास हजारसे ऊपर हो चुका है। अगर ऐसी ही क़दर थोड़े दिन और जारी रही तो बहुत जल्द यह एक लाख हो जायगा। क्योंकि इसी नाटकके बिर्तेपर कम्पनीने बंगला, गुजराती और मरहठी शाखाएं भी खोल दी हैं। और सभी भाषाओंमें इसकी यही धूम है।

पेटू०—किसको यह एक लाख रुपये मिलेंगे?

सेठ—(साइनबोर्डकी तरफ उँगली उठाकर) उसको जिसका नाम यहां लिखा हुआ है।

पेटू०—(पढ़ता हुआ) म—द—न—मदन। क्या यह मदनका नाटक है ?

सेठ—जनाब।

बण्टा०+भिखारी०+पत्तपाती०—कौन मदन ?

पेटू०—अरे ! याद आया। वही मदन ! हाँ हाँ यह वही नाटक है, जिसको वह कौड़ियोंके मोल मेरे पास बेचने आया था—मैंने नहीं लिया। हाय ! अफ़सोस ! मैंने क्या किया ! कैसी ग़लती की। लुट गया। भाग्य फूट गये। मैं नहीं जानता था कि उसकी बदौलत एक दिन मैं भी···।

(अफसोस करता हुआ जाता है)

(घण्टी बजती है)

सेठ—लीजिये जनाब, तमाशा भी खतम हो गया। कल दाम लेकर आइयेगा। फिर तमाशा देख लीजियेगा।

(जाता है)

पत्त०—यह नाटक बड़ा अश्लील है।

बण्टा०—हाँ, चित्तपर प्रभाव बुरा पड़ा है।

भिखारी०—क्यों नहीं, भाव बड़े गन्दे हैं।

गड़बड़—जी हां, अंगूर खट्टे हैं। क्या-क्या लोग हैं।

देखा ख़ाक नहीं मगर समालोचना करने लगे। (सब जाते हैं और दर्शक लोग नाटक-भवनसे निकलकर जाते हैं तथा मोहनी और मालती बाहर आकर अलग खड़ी होती हैं।)

पहला दर्शक—वाह! वाह! ऐसा तमाशा तो आजतक नहीं देखा था।

दूसरा दर्शक—उस मसखरेने तो भाई कमाल ही कर दिया।

तीसरा दर्शक—हमारी तबियत अब भी नहीं भरी। हम फिर कल आयेंगे।

(सब तारीफ करते हुए जाते हैं)

मालती—तमाशेकी तारीफ सबकी ज़बानपर है। मगर लेखकका नाम कोई नहीं लेता।

मोहनी—आज कहीं मदन अपने नाटककी तारीफ सुनने-के लिये ज़िन्दा होता।—(आंसू भर आते हैं और मालतीके कन्धेपर सर रखती है।)

मालती—यह क्या कहती हो?

मोहनी—सच कहती हूं। मालूम होता है वह इस दुनिया-में अब नहीं है।

(मोटरका आना और दोनोंका चढ़कर जाना)

(पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

रास्ता

(सुखियाका गाते हुए आना)

गाना

सुखिया--

मोरी जुल्मी नजर करे घायल जिधर चले पतली कमर चित मायल करे।
मोरी लचक ठुमक पर चटक मटक पर बारी उमर पर सब ललचें ॥
बूढ़े हों चाहे जवान,होते हैं सबही हैरान, मोरी जिसदम हां पायल बजे।

(चार-पांच शोहदोंका आना)

पहला शोहदा—वाहरी महरिन ! अब तो क्या कहना है। दिनोंदिन जोबन निखरता ही आता है।

सुखिया—तो तुम्हारी आंखें क्यों फूट रही हैं ?

दूसरा शोहदा—एक रोज हमारी भी कुछ सुन लो। ए, इधर देखो। (चुपचाप रुपये दिखाता है। सुखिया इशारोंमें जवाब देती है, फिर यह जाता है)

तीसरा शोहदा—महरिन, हम भी उम्मीदवारोंमें हैं। देखें कब किस्मत चमकती है।

चौथा शोहदा—अरे ! इतनेमें मैं ही अभागा हूँ महरिन ?

सुखिया—अरे ! चलो हटो भी, मुझे देर हो रही है।

(जाती है)

पहला शोहदा—आज यार इसने गाली नहीं दी। अब रङ्गपर आयी है।

तीसरा शोहदा—वाह ! फिर क्या पौ बारह हैं।

चौ० शो०—क्यों भाई, दूसरा साथी कहाँ गया यार कुछ दालमें काला है। क्योंकि उसी तरफ़ महरिनिया भी गयी है।

पहला शोहदा—अबे चल उधर देख। दूसरा शिकार ले।

सब०—हां हाँ, अच्छी तो है। चलो नजदीकसे देखें।

(सबका जाना और दूसरी तरफसे बम्भोलानाथका बहुतसी किताबें लिये हुए आना। उसके बाद बण्टाधारका आना)

बम्भोला०—ओहो ! छप गयी भाई ! छप गयी मेरी किताब, छप गयी। बड़ी खुशी है मुझे आज।

बण्टा०—क्या कहना है। आज हमारी पत्रिका प्रकाशित हो गयी। वाह रे हम !

बम्भोला०—पत्रिका ? आप कौन ? क्या कोई सम्पादक हैं ?

बण्टा०—(अलग) अरे ईशीने तो हमारी टांग तोड़ी है। मालूम होता है अभी इशने पहचाना नहीं। (प्रकट) हाँ हाँ, हम शम्पादक हैं।

बम्भोला०—भाई, तब तो हमारी पुस्तककी समालोचना कर दीजिये। बड़ी कृपा होगी। यह किताब मैं आपको भेंट देता हूँ।

बण्टा०—(किताब लेकर अलग) बश बश ! अब टाँग तोड़नेकी कशर निकालता हूं।

(भिखारीलाल, मुफ्तीचन्द, उधारमल और फोकटरायका आना)

भिखारी०—क्यों जनाब ! सुना आपकी किताब छप गयी। लाइये फिर एक हमारी लाइब्रेरीको भीख दीजिये। हम हैं भिखारीलाल मन्त्री पुस्तकालय।

बम्भोला०—लीजिये भाई साहब।

मुफ्तीचन्द—और हम हैं मुफ्तीचन्द आपके दोस्त। दोस्तोंसे आप दाम थोड़े ही लेंगे।

बम्भोला०—जी नहीं।

उधारमल—और हम हैं उधारमल दूकानदार। हमको बतौर नमूनेके भेंट आप देहींगे।

बम्भोला०—बेशक।

फोकट०—और हम फोकटराय नाटक मण्डलीके मैनेजर हैं। एक किताब हमको दीजिये। हम उसका तमाशा करके उसका प्रचार बढ़ावेंगे।

बम्भोला०—हां, भाई हां। (सब किताबें ले लेकर जाते हैं)

लो यारो, जितनी किताबें हमको प्रकाशकजीने दी थीं सब बँट गयीं। अब क्या करूँ ? ख़ैर, जाते हैं, उन्हींके पास। मगर वह तो इधर ही आ रहे हैं।

(पेटूलालका आना)

बम्भोला०—सुना जनाब, हमारी सब किताबें बँट गयीं।

पेटू०—तभी तो हमारा नुक़सान हो रहा है। जितने पढ़नेवाले थे उनके पास तो किताबें मुफ्त पहुँच गयीं। अब आधे दामपर भी इसको कोई नहीं पूछता।

बम्भोला०—क्या नफ़ा न होगा ?

पेटू०—नफ़ा ? नफ़ा ? अरे ! इसमें घाटा ही घाटा नज़र आता है। हम तो किताब छापकर पछताये।

बम्भोला०—अजी लाइब्रेरी और नाटकमण्डलियोंको भी पुस्तक दी हैं। इनके द्वारा प्रचार होनेकी उम्मीद है।

पेटू०—यह और भी बुरा किया। यहां यों ही साहित्यके लिये लोग टका नहीं ख़र्च करते। दूसरे जहां पुस्तकें लाइब्रेरीमें पहुँच जाती हैं या उनका तमाशा खेल दिया जाता है वहां उनकी बिक्री एकदम बन्द हो जाती है। इन लोगोंसे तो ज़रूर दाम लेना चाहिये। क्योंकि किसी एक आदमीके गिरहसे दाम नहीं ख़र्च होता।

बम्भोला०—तो हम अब क्या करें ?

पेटू०—हमारा जितना नुक़सान हो उसे पूरा कीजिये।

बम्भोला०—क्या बजाये मिलनेके और कुछ देना पड़ेगा?

पेटू०—बेशक। यों सस्ते थोड़े ही छोड़ देंगे। जानते नहीं हम हैं पेटूलाल।

बम्भोला०—मगर—

पेटू०—हम कुछ नहीं सुनना चाहते। अभी जाकर हिसाब करते हैं और अपना नुक़सान आपसे कौड़ी-कौड़ी रखा लेते हैं।

(जाता है)

बम्भोला०—यह तो उल्टे लेनेके देने पड़ गये। या ईश्वर, किस मुसीबतमें फँसे। (उसीके पीछे जाता है)

(दूसरी तरफसे दिलजला सुखियाके बाल पकड़े हुए आता है)

दिल०—हरामज़ादी छिनाल कुत्ती कहींकी। उस दूकान-पर तू क्या करने गयी थी? दग़ाबाज झूठी मक्कारा आवारा बदचलन, इसीलिये मैंने तुझसे दिल लगाया था? इसीलिये तुझपर जान देता था? इसीलिये तुझे देवियोंसे बढ़कर पूजता था? इसीलिये मैंने अपनी औरतकी खोज-ख़बर नहीं ली कि मुझसे तू दग़ाबाजी करे?

सुखिया—बस बस बाबूजी। ज़बान सम्भालके बातें कीजिये। नहीं मैं भी अभी कच्ची-पक्की कह बैठूँगी तो—

दिल०—हरामज़ादी ! ऊपरसे आंखें दिखाती है।

(ढकेल देता है। उसके रुपये गिर पड़ते हैं) अयँ ! यह रुपये कहाँसे आये ? किसने दिये ? बोल कम्बख्त कमीनी कुत्ती। मेरे पास रुपये नहीं थे जो तू ग़ैरोंके सामने हाथ फैलाने गयी ? मैंने तेरी ख़ातिर करनेमें किस बातमें कमी की थी ? रुपये नहीं दिये कि गहने नहीं दिये कि कपड़े नहीं बनवाये कि अच्छे-अच्छे खाने नहीं खिलवाये जो तू बाज़ारोंमें पत्ते चाटती फिरती है ?

सुखिया—ऐ ! है ! बड़े यही तो रुपयेवाले हैं न ?

दिल०—अरी ! बदमाश ! और ऊपरसे जलेपर निमक छिड़कती है। रह चुड़ैल ! तेरी नाक काटके सूरत बिगाड़े देता हूँ।

सुखिया—हाय ! हाय ! दौड़ो कोई। मार डाला ! मार डाला !

(गड़बड़का तेज़ीसे आना)

गड़बड़—हाँ हाँ, जाने दो हाथ रोको। यह क्या ग़ज़ब कर रहे हो ? (बीचमें आकर दिलजलाको हटा देता है। रुपये उठाकर सुखिया चल देती है।)

दिल०—मुझे मत रोको। मुझे उसीके साथ जाने दो।

गड़बड़—ठहरो। ठहरो। होशमें आओ। ज़रा मुझे पह-

चानो। गुस्सा दूर करो।

दिल०—आप कौन ? लेखक बम्भोलानाथ ?

गड़बड़—ख़ैर, वही सही। मगर यह आप क्या पागलपना बीच सड़कपर कर रहे थे ?

दिल०—महाशय, क्या कहूं ? अपनी बदक़िस्मतीका हाल क्या कहूं ? पागल हूं, बेशक मैं पागल हूँ। मुझे चुल्लूभर पानीमें डूब मरने दो। मुझे ज़हर खाकर जान दे देने दो। मेरे लिये दुनिया अन्धेरी हो गयी।

गड़बड़—क्यों क्यों क्यों, इतने परेशान क्यों होते हो ?

दिल०—बस मौत ! मेरी मौत बुला दो। मुझे हमेशाके लिये गहरी नींदमें सुला दो। मेरी आँखोंको फोड़ दो कि दुनियाकी दग़ाबाजी न देख सकें। मेरे दिलको पत्थरसे कुचलकर फेंक दो कि इसमें मुहब्बतका नामोनिशान न रह जाये।

गड़बड़—क्या तुम उस औरतसे मुहब्बत करते थे ?

दिल०—भाई, मुहब्बतका नाम मत लो। दुनियासे मुहब्बत एकदम उठ गयी। मुहब्बतका नाम महज़ धोखा है। दग़ाबाजी है। बेवफ़ाई है। मुहब्बत नहीं है। औरतोंके दिलमें मुहब्बत नहीं होती।

गड़बड़—होती है भाई, होती है।

दिल०—नहीं नहीं, हर्गिज नहीं। झूठ, सरासर झूठ है। औरतोंकी दोस्ती मतलबकी दोस्ती होती है। औरतोंके दिलमें मुहब्बत पानीमें परछाहींकी तरह होती है। जो सामने होता है, उसीका कम्बख्त दम भरती है।

गड़बड़—हां, जो कमीनी होती हैं, जिनमें शराफतकी बू नहीं होती। भाई, तुम्हें दुनियाका तजुरबा नहीं है। तुम धोखेमें बड़ी बेवकूफी कर रहे हो जो ऐसी आवारा कुत्तियों-से मुहब्बतकी उम्मीद करते हो। लाख खूबसूरत हों तो हों मगर यह मुहब्बत क्या जानें? जिनके रगोंमें शराफतका खून नहीं उनके दिलमें भला कभी मुहब्बत पैदा हो सकती है? मुहब्बतके मानी यह मतलब जानती हैं।

दिल०—अरी सुखिया! मैं तेरे तलवोंपर नाक रगड़ता था। तेरे पैरोंपर माथा घिसता था! तेरे चरणोंकी धूलको सर चढ़ाता था। और तूने मेरे कलेजेमें दग़ाबाजीकी छुरियाँ चलायी!

गड़बड़—यह तो कमीनोंकी कुदरत है। ऐसा तो वह करती ही हैं। गदहेको गंगाजलमें नहलाओ तो वह जमीनही पर लोटेगा। कुत्तेको मोहनभोग भी खिलाओ तो वह मैला सूंघनेसे बाज न आयेगा। अपने दिलको सम्भालो। कमीनों-की मुहब्बत छोड़ो।

दिल०—अपनी अख्तियारी बात होती तो इस जालमें आजतक शायद कोई भी फंसा न होता।

गड़बड़—खैर फंसे तो फंसे मगर अब भी संभलो,सीखो।

दिल०—सीखा और खूब सीखा।

गड़बड़—क्या।

दिल०—औरतोंसे नफरत करना।

गड़बड़—क्या तुम्हारी व्याहती औरतने कभी ऐसी दग़ा-बाजी की?

दिल०—आह! किस परेशानीकी घड़ीमें तुमने उसकी याद दिलायी। मेरे परेशान दिमागको और भी परेशान कर दिया। न जाने वह बेचारी कहां है! महीनोंसे लापता है। इस चुड़ैलकी मुहब्बतमें फँसकर उसकी कोई खबर न ली। क्या मालूम वह जीती है या मर गयी।

गड़बड़—जीती है।

दिल०—जीती है? बोलो बोलो कहां है वह?

गड़बड़—पहिले तुम मेरे सवालका जवाब दो। कभी उसने तुम्हारे साथ ऐसी दग़ाबाजी की?

दिल०—नहीं, कभी नहीं। सिर्फ वह घमण्डी और मर-दानी थी।

गड़बड़—तुम्हारे ही ज़नानेपनकी वजहसे। कभी तुमने

उससे मुहब्बत की ?

दिल०—अफ़सोस ! उसके दिल ही न था।

गड़बड़—दिल था।

दिल०—तो उसमें गर्मी न थी।

गड़बड़—गर्मी कहाँसे पैदा होती, कभी तुमने उसमें आँच भी लगायी ? दिलपर हाथ रखकर बोलो।

दिल०—बेशक, मैं उससे मुहब्बत नहीं करता था। ख़ाली जोरूकी गुलामी करता था। सच पूछो तो उस वक्त मैं मुहब्बत करना जानता ही न था।

गड़बड़—तभी तो वह हाथसे बेहाथ हो गयी।

दिल०—मगर अब वह कहीं मिल जाती तो उसके पैरों-पर गिरकर अपने क़सूरोंकी माफ़ी मांगता। और अपना चोट खाया हुआ दिल उसके चरणोंपर अर्पण कर देता।

गड़बड़—तो चलो, मैं उसका पता बताता हूं। शुक्र है कि उधरका ख़याल चोट खाकर इधर हो गया।

(दोनोंका जाना और पर्देका उठना)

तीसरा दृश्य

पेटूलालका मकान

(सत्यानाशी और पेटूलाल)

सत्या०—आह ! क्यों सताता है ? अरे क्यों सताता है ? ऐसे ही जान लेनी हो तो एकबारगी जान ले ले। दम घोंट-घोंटकर क्यों मारता है ?

पेटू०—वाह ! वाह ! सताती तुम हो कि मैं ?

सत्या०—मुझे छोड़ दे। तेरे पैरोंपर गिरती हूं, छोड़ दे।

पेटू०—ऐसी ख़ूबसूरत औरत पाकर कौन उल्लूका पट्ठा होगा जो छोड़ देगा ?

सत्या०—अब तो मैं अच्छी हो गयी। अब क्यों नहीं मुझे घर जाने देता ?

पेटू०—घर ? अरे ! यह घर नहीं तो क्या जङ्गल है ?

सत्या०—आह ! मुझे अपने बच्चेका मुंह देखने दे। मेरे बिना मेरा बच्चा बिलख-बिलखकर मर गया होगा।

पेटू०—तो क्या परवाह है ? बच्चे फिर हो सकते हैं। अभी तुम्हारी उमर ही क्या है ?

सत्या०—मेरे पति भला क्या कहते होंगे कि मैं मर-दानियतके जोशमें कहां भाग गयी। मैं किस तरहसे उनको

बताऊँ कि मैं अबतक धोखेमें थी। भूलमें पड़ी थी। औरतोंमें कितनी ही मरदानियत हो, वह उसे शोभा नहीं देती बल्कि उसे और देवनी-सी बना देती है। हमारी प्रकृतिने हमें पुरुषोंके आधीन बना रखा है। फूलोंमें कोमलता ही अच्छी मालूम होती है कठोरता नहीं। अब आँखें खुलीं। पति! किस तरहसे मैं अपनी मूर्खताके लिये माफ़ी मांगूँ? अरे! हत्यारे! मुझे अपने पतिके पास जाने दे। अरे! जाने दे।

पेटू०—सिर्फ ज़रा समझका फेर है। मुझीको अपना पति समझकर मेरे पास चली आओ तो क्या हर्ज है? क्या उसमें कोई हीरा मोती लगे हुए हैं?

सत्या०—चुप चण्डाल! ईश्वरने औरतोंको कमजोर और अबाला बनाया है तो यह भी समझ ले कि अपने पातिव्रत-धर्मको पालन करनेके लिये उसी ईश्वरने हमलोगोंको शेरनीसे भी बढ़कर ताक़त दी है। ख़बरदार! जो कभी इस नीयतसे मेरे नज़दीक आया। तेरी छातीका ख़ून पी लूँगी। दग़ाबाज़, तूने महीनोंसे मुझे इसको अस्पतालका कमरा बताकर यहीं कैदकर रखा है। पहिले कहता था कि जब अच्छी हो जाओगी तो डाक्टर साहब जाने देंगे। अब तो मैं अच्छी हो गयी। कहां गया तेरा डाक्टर। ज़रा मैं भी तो उसकी सूरत देखूं। आज तू यह रंग लाया। चण्डाल! हत्यारा!

पापी ! कसाई !

पेटू०—ओह ! फिर दिमाग़ गर्म हो गया। अच्छा शान्त हो शान्त हो। कुछ दिनों और यहीं जब आराम करोगी तब धीरे-धीरे तुम्हारी यह गर्मी उतर जायेगी।

(जाता है और बाहरका दरवाज़ा बन्द कर देता है)

सत्या०—अफसोस ! कुभाग्यकी बलिहारी ! बच्चेसे बिछुड़कर पतिसे अलग होकर इस दग़ाबाज़के जालमें फंसी। अपनी ही मूर्खताके कारण। मैं मरदानियतमें दीवानी थी। घमण्डमें चूर थी। शेखीमें डावाँडोल थी। अपने गुणोंको छोड़कर पराये गुणोंको लेनेके लिये लपकी। पतिके हृदयरूपी अति मनोहर और आनन्ददायिनी राजधानीको छोड़कर ऊसर-मैदानका क़ब्जा करनेके लिये बढ़ी, मगर न इधरकी रही न उधरकी रही। मेरे ही अनादरसे मेरे पतिका दिल मुझसे फिर गया। अरी ! सुखिया ! तूने यह क्या किया ? उस दिनकी बात। आह ! जन्मभर भूल नहीं सकती। याद आते ही कलेजेमें छुरी चलती है। अरी सुखिया ! पापिन ! अरी हत्यारिन ! जिस पत्तलमें तूने खाया उसीमें छेद किया। अगर तू कहीं मिले तो तुझे कच्चा चबा जाऊं। तेरी बोटी-बोटी नोच लूं। औरतें सब सह सकती हैं, मगर डाह नहीं सह सकतीं। प्रेमकी चिनगारी चाहे दिलमें न उठे मगर

डाहकी आग बड़ी जल्दी भड़क उठती है। और जहाँ इसकी लपट निकली तो दूसरी तरफ़ प्रेमकी आग भी सुलगने लगती है। क्योंकि प्रेम और डाह दोनों एक ही चीज़के दो सिरे हैं। जितना ही सुखियासे मैं जल रही हूं उतना ही स्वामीकी तरफ मेरा प्रेम बढ़ रहा है। मैं पहिले पतिसे प्रेम नहीं करती थी। मगर तेरी डाहने मुझे प्रेम करना सिखला दिया। तुझसे अपनी चीज़ छीन लेनेके लिये पगली बना दिया, चीज चोरी हो जानेके बाद उसकी क़दर मालूम होती है। पति कहां हो? अगर कहीं तुम मिल जाते तो तुम्हें मैं आंखोंमें पुतलीकी तरह रखती। कलेजा चीरकर रखती। चोरीके बाद चौगुनी हिफ़ाज़त करती। आओ स्वामी, मेरे हृदयमें बसो।

गाना

सत्या०—आओ आओ सइयां लगाओ मोहें छतियां
दरसकी प्यासी तरस रही अंखियां। आओ—
डाल गले बइयां सुनाओ मीठी बतियां।

"हंस बोलुहिंगी मृदु बैननते फिर मानकी बैन न भाखुहिंगी।
परिरम्भनको मुख चुम्बन दूं, अधरातलके रस चाखुहिंगी॥
लपटाय हिये तनताप बुझाय ब्रह्मानलको दल नाखुहिंगी।
अबके रस राजकिसोर मिले हि बड़े कठलोकर राखुहिंगी॥

(दरवाजेका खुलना और दिलजलाका आना)

दिल०—कौन मेरी प्यारी ?

सत्या०—कौन मेरे स्वामी ?

(दोनोंका लिपट जाना। दिलजलाके लड़केका दौड़ते हुए, और दो कान्सटेबुलोंके साथ बंधे हुए पेटूलालका आना।)

बच्चा—अम्मां, मेली अम्मां !

सत्या०—मेरा बच्चा मेरे कलेजेका टुकड़ा।

(गोदमें उठाकर चूमती है और गड़बड़ एक थानेदारके साथ एक गहनेका बकस लिये हुए आता है)

गड़बड़—देखिये थानेदार साहब ! यह बकस इसी घरसे निकला है। इसकी रिपोर्ट पहिले ही बम्भोलानाथकी स्त्रीकी तरफ़से लिखी जा चुकी थी। मगर अबतक उसपर कोई कार्रवाई नहीं हुई।

थानेदार—इसलिये कि अबतक इसका कोई ठीक पता नहीं मिला था।

पेटू०—इस डिब्बेको क्यों उठा लाये जी ? इसमें हमारी स्त्रीके गहने हैं।

गड़बड़—तुम्हारे बापके भी कोई स्त्री थी ? जालिया कहींका। तूहीने बेचारे बम्भोलानाथकी स्त्रीके गहने चोरी कराये। उनको बहकाकर उन्हींके दामसे उनकी किताब छपवायी।

ऊपरसे मुनाफ़ा भी खुद मार लिया और झूठमूठ घाटेका बहाना करके उस बेचारेका घरतक बिकवा लिया। कौड़ी कौड़ीका मुहताज बना दिया। दुनियामें यही ईमानदारी रह गयी।

थानेदार—इस कम्बख्तको ले चलो थानेपर। इस औरतको ज़बरदस्ती कैदमें रखनेके लिये और चोरीके जुर्ममें तुमको गिरफ़ार किया।

(सब जाते हैं मगर दिलजला और सत्यानाशी एक दूसरेके पैरपर गिरते हैं।)

गड़बड़—(लौटकर) वाह! वाह! ईश्वर न करे कहीं प्रेमियोंको मुलाक़ात बेजगह हो। अजी साहबान, उठिये। इन्हीं बेवक़ूफियोंको देखकर ईश्वर बेचारे इतने शर्मा गये कि प्रेमियोंके मिलाप बन्द करनेके इरादेसे इनके बीचमें वियोग-की दीवार बना दी है।

(सबका जाना)

(पर्दा गिरता है)

चौथादृश्य

सड़क

(बण्टाधारका आना)

बण्टा०—ईश्वर जब देता है तो छप्पर फाड़के। इधर हमारी नवीन पत्रिका प्रकाशित हो गयी। शहरमें सैकड़ो ग्राहक फांश-फूंशकर बहुतशा रुपया इकट्ठा कर लिया। और उधर श्रीमती शुखिया देवी भी हाथ आ गयीं। एक स्त्रीकी शचमुच बड़ी आवश्यकता थी। जब रुपया होता है तभी इशकी आवश्यकता भी मालूम होती है। क्यों भाई, ठीक है न? हम ही ऐशे गुरूघंटाल थे जो श्रीमती शुखिया देवी मिलीं। दूशरे किशीको श्वप्नमें भी ऐशी शुन्दर शुडौल हंश-मुख स्त्री कहाँ नशीब होती हैं? जबशे श्रीमतीने दिलजलाकी नौकरी छोड़ दी है तबशे वह अपनी शुशरालमें रहती हैं और ईश्वरकी कृपाशे उनकी शुशराल हमारे घरके पाश ही है। फिर क्या था। श्रीमतीजीने हममें अपने पतिशे विशेष गुण पाये। बश, हमारा भाग्य चमक गया। हमने ऐशे अवशरपर क्या अच्छी तरकीब खेली है कि आहाहाहा! उशका पति हमारा क़रज़दार था। झट चौगुना-पचगुना शूद लगाकर जिशमें वह दे न शके उशपर दावा करके कुरकी और वारंट

दोनों कटा दिये हैं। और हमने एक अपना आदमी भी उशके घर बार-बार कुर्की ले जानेके लिये तैनात कर रखा है। जिशमें वह दुष्ट घरपर आने न पाये। अब वह भागा-भागा फिरता है और श्रीमान् बण्टाधारजी रातों-दिन उशके घरमें पड़े रहते हैं। वाह रे हम। अब जाते हैं हम वहीं।

गाना

बण्टा०—चलूँ प्यार करूँ अपनी मैं जनियां मोहनियांको हांजी हां।
छतियां लगाऊँ मन बहलाऊँ डाल गले बहियां मैं प्यार
करूँ जनियांको हांजी हां।
जाता हूँ गोरेशे गालोंको चूमूँगा खूब लिपट चिमट हां।

(जाता है)

(बम्भोलानाथ और रामभोलीका आना)

बम्भोला०—अब कहां चलूँ? किससे भीख मागूँ? सभोंने तो जवाब दे दिया, यहांतक कि तुम्हारे मैकेवालोंने भी धता बतायी। दो ही दिनमें ऊब गये। साफ़-साफ़ कह दिया कि भाई, जाओ अपने घरका रास्ता लो। घरका रास्ता तो बड़ी खुशीसे लूँ, मगर अब घर भी हो कहीं तब तो। सब तो उस हत्यारे पेटूलालने बिकवा लिया।

रामभोली—और दिन-रात लेख और किताबें लिखो।

बम्भोला०—जी तो बहुत चाहता है कि अपनी दुर्दशा-

पर कुछ लिख डालूं। बड़ा अच्छा विषय है। मगर तुम्हारे मारे लिखने पाऊं तब तो। ईश्वर न करे तुम्हारी ऐसी मूर्ख स्त्री किसीको मिले।

रामभोली—और ईश्वर न करे तुम्हारे ऐसा आवारा और खब्ती मर्द किसी स्त्रीको मिले। यहां तो मुँहका आहार बन्द हो गया और वहां इनको ऐसे संकटकी घड़ीमें आशनाईकी सूझी। घरमें जो कुछ गहने थे वह भी सब दे आये उस चुड़ैलको।

बम्भोला०—अच्छा अच्छा, तो तुम्हारी बलासे। मैंने उन गहनोंको बनवाया था। जिसे चाहा उसे दिया।

रामभोली—हाय राम! अगर गहने होते तो कुछ दिनोंका सहारा तो होता। और गहने होते हैं किस दिनके लिये? अब तुम्हीं बताओ शामका ठिकाना है कहीं? क्या खायेंगे? कहाँ सोयेंगे?

बम्भोला०—खायेंगे ज़हर, और सोयेंगे चितापर। समझी? बस, अब बहुत जी न जला। तुझे जो इन बातोंसे परहेज़ हो तो जाके गंगामें डूब मर।

(गड़बड़का आना)

गड़बड़—वाह! यह क्या कहते हैं आप। लीजिये, आपका बकस बरामद कर लाया। मगर आपलोग कहाँ थे?

ढूँढ़ते-ढूँढ़ते परेशान हो गया था।

राम०—धन्य भाग ! कुछ दिनोंके लिये जान बच गयी।

बम्भोला०—ज़रा सुसराल चला गया था। (रामभोलीसे) लो तुम्हारे गहने तो मिल गये। लाओ एक-दो गिरवीं रख आऊँ तो कुछ काम चले।

गड़बड़—हरगिज़ नहीं। क्या मैं मर गया हूँ? मेरी दोस्ती किस वक्त काम देगी। चलिये मेरे घर। जबतक आपको कोई काम न मिले तबतक आप लोगोंको वहीं रहना पड़ेगा।

(तीनोंका जाना और दूसरी तरफसे मोहनी और मालतीका मरदानी पोशाकमें आना)

मालती—सखी ! मुझे लज्जा मालूम होती है। इस पोशाकमें मुझसे अब आगे क़दम नहीं उठाया जाता। अब भी लौट चलो। इस मूर्खताको कोई नहीं जानेगा।

मोहनी—मूर्खता? अरी मालती, मैं तो सुनती हूं कि पुराने ज़मानेमें स्त्रियाँ अक्सर काम पड़नेपर मर्दोंकी पोशाकमें निकलती थीं।

मालती—तुम तो सुनती ही थी, मगर मैं आज इस बातको अपनी आँखोंसे देख रही हूँ।

मोहनी—देख सखी, तू मुझे फिर शर्मा रही है। इसी-

लिये तुझसे मैं अपने दिलका हाल नहीं बताती थी।

मालती—तभी तो आज यह स्वांग बनाकर घरसे निकलनेकी नौबत आयी। वरना अगर पहिलेसे बता देती तो बेचारा मदन महीनोंसे जेलखानेमें क्यों सड़ता? उसके महाजनोंके रुपये उसी वक्त दे दिये जाते। चलो झगड़ा छूटता।

मोहनी—सिर्फ़ इसीलिये साफ़-साफ़ नहीं कहा था कि स्त्रियोंका मान नष्ट होगा। उनकी स्वाभाविक लज्जापर कलंक लगेगा। दुनिया मुझपर थूकेगी और सबसे बड़ा डर यह था कि तू दूसेगी।

मालती—तो क्या अब दूसनेसे बाज रहूँगी।

मोहनी—अरी, क्यों रह रहकर चिढ़ाती है? जानती नहीं कि इस रोगमें आदमी पागलोंसे भी बत्तर हो जाता है?

मालती—केवल मर्द ही, औरतें कभी नहीं।

मोहनी—क्या ऐसी हालतमें भी नहीं जब किसीकी जान जा रही हो, कोई बेमौत मर रहा हो और उसकी जान बचानेका उपाय हमारे हाथमें हो, मगर उस उपायको काममें न ला सकते हों?

मालती—प्रेममें तो सभी प्रेमी बेमौत मरने लगते हैं, मगर किसी स्त्रीके दिलमें तुम्हारे ऐसा परोपकारका ख़याल

नहीं होता। अगर स्त्रियाँ अपने प्रेमियोंपर दया करने लगें तो काहेको कोई प्रेमी जले, मरे या तड़पे ?

मोहनी—सखी, तू भी कितनी भोली है। आगकी प्रकृति जलानेकी है। अगर पतिङ्गा उसमें जलकर जान दे दे तो आगका क्या दोष ? वह तो बेचारी खुद ही जल रही है। वह अपनी जलनके आगे दूसरेकी जलन क्या समझे ? प्रेमके दीवानोंपर लज्जा स्त्रियोंको दया नहीं करने देती। पर जब वह बेचारे किसी दूसरेके हाथसे सताये जाते हैं तब वह उनकी दशा देख भी नहीं सकतीं। लज्जाका दबाव मान नहीं सकतीं।

गाना

मोहनी—चलो सखी सइयाँकी नगरियां। डाले गले बइयां चलो
गुइयाँ पइयाँ पइयाँ हां हां मानो इतनी अरजिया।
"नैननको तरसइये कहां लौ कहां लौ हिये बिरहागिमें तैये।
एक घरी न कहूँ कल पैये कहां लगि प्राननको कलपैये।
आवे यही अब जीमें विचार सखी चलु सौतिहुँके घर जैये।
मान घटे तो कहा घटि है जु पै प्रान-पियारेको देखन पैये।"
"नकशे पाके सिजदेने क्या क्या किया जलील *
हम कूचये रकीबमें भी सरके बल गये।"
अब तो नाथ तुमरे हाथ राखो लाज सइयां।
(गड़बड़का आना:)

गड़बड़—वाह ! वाह ! मालूम होता है दुनियामें अब कोई मर्द नहीं रहा। तो बेचारी स्त्रियाँ क्या करें ? खुद ही मर्द बनकर इस कमीको पूरा करने लगीं।

मालती—(अलग) गज़ब हुआ। यह तो पहचान गया। (प्रकट) जी नहीं; जनाब, जब मर्द जनाने हो गये तो स्त्रियोंने भी मर्द बनना शुरू कर दिया।

गड़बड़—(हाथ जोड़कर) मैं भई तुमसे हारा। मैं तो अपने को अबतक सेरभर समझता था। तुम सवा सेर निकली।

मोहनी—अच्छी जोड़ी मिली।

गड़बड़—आमीन !

मोहनी—मालती शर्माती क्यों हो ? पूछो कौन हैं यह।

मालती—तुम्हीं पूछो ? मैं नहीं पूछनेकी। इस मुंहफटसे कौन बोले। मुफ्तमें अपनी आबरू खोवे।

मोहनी—मेरी सखी पूछती है कि आप कौन हैं।

गड़बड़—अच्छा होता कि वह खुद ही पूछतीं। मगर खैर, कह दीजिये कि मैं बिन ब्याहा हूँ।

मोहनी—(मुस्कुराकर) वाह ! वाह ! क्या सवालका जवाब है कि जवाबमें सवाल है।

मालती—सखी, मुझे यह ठठोली एक आंख नहीं भाती। मैं जाती हूं यहाँसे।

मोहनी—जब तुम ठठोली करती थी तब तो मैं हाथ जोड़ती थी, और जब मैं सीधी-सीधी बातें कर रही हूं तो तुम चिटक रही हो। वाह री सखी !

गड़बड़—देखियो, तुम्हारे इस भेषमें कुछ भेद मालूम होता है। अगर मेरे लायक कोई काम हो तो उसके लिये मैं हर तरहसे तैयार हूं।

मोहनी—मैं इसके लिये धन्यवाद देती हूँ। अगर तकलीफ न हो तो मुझे एक जगहका रास्ता बता दीजिये।

गड़बड़—रास्ता बताना कैसा ! मैं साथ चलकर जहाँ कहो वहाँ खैरियतसे पहुंचा दूं।

मालती—(मुस्कुराकर) मगर देखो, मसखरापन न करना।

गड़बड़—माना कि मैं बुरा हूँ मगर सच बताइये। क्या बानिये फसाद तुम्हारी अदा नहीं ? "शाद"

(सब जाते हैं। पर्दा उठता है।)

पांचवां दृश्य

जेलखाना

(मदन अकेला)

मदन—रुपया ! तू बड़ी चीज है। आदमीकी चमकती

हुई तकदीर है। तेरी ही बदौलत पापी धार्मिक कहलाता है, झूठा सच्चा गिना जाता है, बेईमान ईमानदार समझा जाता है। मगर जहां तू नहीं है धर्म पापकी तरह, सच्चाई झुठाईकी तरह और गुण ऐबकी तरह देखे जाते हैं। तूही मुहब्बत है, तू ही नातेदारी है। जब तू नहीं तो बस दुनिया अंधेरी है, उफ ! कैसी अन्धेरी है, कोई मुझसे पूछे। न बाप है न भाई है न यार है न दोस्त है न एगाने हैं न बेगाने। मैं हूँ और यह कालकोठरी है। अरे हत्यारे महाजनो ! गरीबोंको सतानेवाले महाजनो ! एक-एकके सौ सौ वसूल करनेवाले महाजनो ! जरा ईमानका खयाल करो। कुछ रहम करना भी सीखो। मुझे यहां दफन करके मेरी हड्डी और मांसको घुला-घुलाकर क्या पाओगे ? मुर्देको मारनेमें क्या मिलेगा ? मुझे आज़ाद छोड़े रहते तो कोई न कोई बन्दोबस्त करके तुम्हारे रुपये अबतक दे डालता। अब मैं यहां कहांसे रुपया पैदा करूं ? हाय ! तुम लोगोंने मुझे कहींका न रखा। कभी-कभी पत्रोंमें किसीके लेखोंसे दिलकी जलनको शान्त करता था ! मगर हत्यारो ! तुमने मेरा यह आनन्द भी लूट लिया। ईश्वर जाने उनके लेख अब भी प्रकाशित होते हैं या नहीं। जैसे दुनिया मुझे भूल गयी, शायद उन्होंने भी मुझे भुला दिया हो। अगर उनके लेख कहीं यहां भी पढ़नेको मिला करते तो मुझे

इस नरक कोठरीमें भी स्वर्गका सुख मिलता। मगर नहीं देवी, नहीं। तुम्हारा शुभनाम लेनेका अब मैं नीच अधिकारी नहीं रहा। तुम्हारा पुण्यमय चित्र इस अधम कैदीके हृदयपर शोभा नहीं पाता। मगर मैं क्या करूं।

साहित्य! अरे कठोर और निर्दयी साहित्य! तेरी तन-मन-से सेवा करनेका क्या यही नतीजा है कि मैं कैदमें तड़पूं?

(गड़बड़का आना)

गड़बड़—नहीं देव, घबड़ाइये नहीं। यह आपके इम्तहान-का वक्त है। हिम्मत न हारिये।

(पैरपर गिरता है)

मदन—अयं! आप कौन? चाण्डालके घरमें देवताका प्रवेश! अरे! अरे! यह क्या कर रहे हो?

गड़बड़—(मदनके पैरोंपर) मैं वही कर रहा हूँ जो कुछ दिनों बाद आपके साथ दुनिया करेगी। मगर दुनिया पास की चीज देख नहीं सकती। इसीलिये जब चीज दूर हो जाती है तब उसकी असलियत इसे दिखायी पड़ती है।

मदन—(गड़बड़को ऊपरकी बातोंके मध्यमें उठाकर) आखिर आप कौन हैं महाशयजी?

गड़बड़—मैं सच्चे साहित्य-सेवियोंका पूजनेवाला हूं। गुणोंका परखने और तौलनेवाला हूं, धोखेबाजोंको धोखा

देनेवाला, पाखण्डियोंको दुरुस्त करनेवाला, मसखरोंमें मसखरा, चालबाजोंमें चालबाज, सच्चोंमें सच्चा, झूठोंमें झूठा, दुनियाका एक मामूली आदमी हूँ। खैर! ईश्वरकी कृपासे आपके इम्तहानके दिन पूरे हो गए और आपकी मुसीबत कट गयी।

मदन—क्या महाजनोंने दया करके.....

गड़बड़—नहीं, उनके रुपये मय चौगुने सूदके बेबाक़ कर दिये गये।

मदन—मित्रवर, मैं आपको किन शब्दोंमें धन्यवाद दूँ?

गड़बड़—नहीं नहीं, मैं नहीं हूं। आपके धन्यवाद और सम्मानके अधिकारी वह आ रहे हैं।

(मोहनी और मालतीका मरदानी पोशाकमें आना)

मदन—(मोहनीको गले लगानेके लिये आगे बढ़ता हुआ) कौन, आप ही मुझे इस नरकसे उबारनेवाले, मुझे हमेशाके लिये ख़रीदनेवाले, मेरे स्वामी और मेरे देवता हैं? आइये, धन्यवाद देनेके पहले आपको गले लगानेका सौभाग्य मुझे प्राप्त कर लेने दीजिये।

मोहनी—(सकुचाकर पीछे हटती हुई—अलग) हाय! नाहक़ आयी। किस मुसीबतमें फँसी। या ईश्वर, अब क्या करूँ?

मदन—आह ! अब समझा। इस आनन्दमें मैं अपनेको भूल गया था। मैं अधम हूं। नीच हूँ। कैदी हूँ। मैं आपको गले लगाने योग्य नहीं हूँ, माफ़ कीजिये, मुझे आप अपने चरणोंको चूमने दीजिये। यह चरणामृत देकर मेरा जीवन सफल कीजिये।

(कदम चूमनेके लिये मोहनीके पैरोंपर गिरता है)

मोहनी—(झटसे पैर खींचकर पीछे हटती है) हाय ! राम ! यह मैं नहीं सह सकती।

(मालतीकी गोंदमें मूर्च्छित हो जाती है)

मदन—(आवाज़ सुनते ही चौंककर उठ पड़ता है और मोहनी की तरफ़ गौरसे देखता है) यह प्यारी आवाज़ ! रातोदिन मेरे कानोंमें गूँजनेवाली आवाज़। चेहरेका वही नक़शा ! कौन ? अरे ! तुम तुम तुम हो। आह ? (गड़बड़की गोदमें मूर्च्छित हो जाता है।)

(पर्दा गिरता है)

छठा दृश्य

सुखियाका मकान

(बण्टाधारका आना)

बण्टा०—अरी श्रीमती शुखिया देवी, अरी ओ श्रीमती

शुखिया देवी !

सुखिया—(पर्दैके भीतरसे) कौन है महरा ?

बण्टा०—(अलग) देखो श्रीमान बण्टाधारजीको महरा बनाती है। (प्रकट) नहीं नहीं, हम महरा नहीं हैं।

सुखिया—(भीतरसे) तब कौ हो तुम खां साहब ?

बण्टा०—(अलग) अयँ ! क्या कोई मौलवी शाहब भी यहां तशरीफ़ लाते हैं ? (प्रकट) यहां आकर देखो तो कौन है।

सुखिया—(भीतरसे) अरे ! राउत भुजवा तुम हो ?

बण्टा०—धत तेरीकी ! वहींशे उजवा-भुजवा बना रही है। देखती नहीं घण्टे भरशे मिठाईका दोना लिये खड़े हैं यहांतक आया नहीं जाता।

सुखिया—(भीतरसे) आती हूँ ज़री बरतन धो लूं।

बण्टा०—आना हो तो आओ नहीं तो हम अकेले शब खा जायेंगे।

सुखिया—अरे रुको भाई आयी।

(सुखियाका आना)

बण्टा०—महरा तो नहीं है घरपर ?

सुखिया—कुर्कीके डरके मारे कहीं वह घरपर रहने पाता है।

बण्टा०—बश बश ठीक है। लो यह गर्मागर्म जिले-

बियां। तीन आनेकी हैं, तीन आनेकी।

सुखिया—और पेड़ा ?

बण्टा०—पेड़ा तो। पेड़ा तो—

सुखिया—क्या नहीं लाये ?

बण्टा०—लाये थे मगर—

सुखिया—मगर क्या ?

बण्टा०—हम राश्तेमें खा गये।

सुखिया—वाह रे चटोरे ! तो जाओ फिर ले आओ।

बण्टा०—अच्छा तो जिलेबियाँ दो लौटाकर पेड़ा ले आवें।

सुखिया—धत तेरीकी ! तीन आनेकी जिलेबीमें नानी मरी जाती है। जाओ दूसरा पैसा खर्च करो।

गाना

बण्टा०—खाओगी कितनी मिठाई मोरी जानी बोलो हुआ हूँ अमीर
पूआ खिलाऊं मालपुआ खिलाऊं खिलाऊंगा तुझको मैं खीर।
अब तो आओ जरा गले लग जाओ। तिरछी चितवनका मारो न तीर॥

सुखिया—जाओ जल्दी बाजार मोहे लड्डू खिला दो बर्फी चखा दो
पेड़ा मंगा दो जान।

बण्टा०—जिलेबी तो खाओ इशमें जी रश है दिलमें भी रश है तुममें
भी रश है कहना लो मान।

(बाहरसे आवाज आती है)

"महरा अरे ओ महरा! महाजन बण्टाधारकी जारी करायी हुई कुर्की आयी है।"

बण्टा०—(घबड़ाकर इधर-उधर दौड़ता है) अरे! शुशरी कुर्कीने शब मजा बिगाड़ दिया। इसी शमय शुशरीको आना था? हमारी जारी करायी हुई कुर्की हमींको खलनी थी? जिलेबी भी न खाने दी। श्रीमतीजी हमको शीघ्र छिपाइये। आबरू बचाइये।

(बाहरसे फिर आवाज आती है)

"अबे महरा निकलता है कि दरवाजा तोड़ दें।"

बण्टा०—हाय हाय! यह कम्बख्त हमारा नौकर तो और गड़बड़ कर रहा है। हे श्रीमतीजी कहीं छिपा दो हमें।

सुखिया—हाय! दइया मैं क्या करूं? ठहरो, एक बोरेमें तुम्हें बन्द किये देती हूँ।

बण्टा०—हाँ हां, मगर हम बहुत बड़े आदमी हैं।

सुखिया—तो बोरा भी बहुत बड़ा है।

(जाती है और एक बोरा लाकर बण्टाधारको उसमें बन्द करतीहै)

सुखिया—देखो खबरदार, टससे मस न होना। नहीं अपनी आबरू तो लोहीगे, और हमारा भी हुक्का बन्द करा-ओगे। अच्छा, अब बंध गये। मगर मेरे उठाये नहीं उठनेके। तुम्हीं लुढ़कते हुए कोनेमें चले जाओ।

(बण्टाधार लुढ़कते हुए कोनेमें जाता है। और बाहरसे दो चपरासियोंके साथ बण्टाधारका आदमी कुर्की लेकर आता है।)

पहिला चप०--ए ! दरवाज़ा बन्द करके चुप मारे बैठी थी। यह नहीं जानती थी कि चचा लोग दरवाज़ा तोड़कर घुस आनेवाले आसामी हैं।

दूसरा चप०--बोल महरा कहां है ?

सुखिया--(ऐंठकर) मैं क्या जानूं ? वह तो कलकत्ते चले गये।

पहला चप०--ए ! छिनालपन अपना रहने दो। यहाँ नखरे उठाने मैं नहीं आया हूं। सीधे सीधे जवाब दो। नहीं ज्यादे ऐंठोगी तो उतारकर बीस मारूंगा और एक गिनूंगा। चुड़ैल नहीं तो।

आदमी—देखोजी, महरा नहीं मिलता तो जाने दो। घरका माल-असबाब सब कुर्क कर लो।

दूसरा चप०—कुर्क क्या करें ? घरमें माल भी कुछ हो तब तो। उसने पहलेहीसे मालूम होता है सब अलग कर दिया है।

आदमी—अरे ! भाई ! देखो देखो यह बोरा कैसा है।

सुखिया—हां हां, उसको मत छुना। वह महराका नहीं है उसमें मेरे मयकेका माल है।

पहला चप०—चुप रह। यह बड़ी पाजी है। इसने सब माल-असबाब इसीमें बन्द कर रखा है। देखो कितना भारी है।

आदमी—ठीक है। इसीको कुर्क करके नीलाम कर डालो। इसीसे बण्टाधारजीके रुपये सब वसूल हो जायेंगे। रिपोर्टमें लिख दो माल खराब होनेके डरसे मौकेपर नीलाम कर दिया।

सुखिया—नहीं नहीं।

दूसरा चप०—चुप। अलग हट। बोरा कुर्क कर लिया। लाओ ठेला, ले चलो चौकमें नीलाम करेंगे।

(तीनों आदमी बोरेको लुढ़काते हुए ले जाते हैं। सुखिया पीछे-पीछे मना करती हुई जाती है।)

(पर्दा उठता है)

सातवां दृश्य

चौक बाजार

(ठेलापर लदे हुए बोरेमें बन्द बण्टाधारजी आते हैं और पीछे झुण्डके झुण्ड लोग आते हैं।)

आदमी—भाई, जरा हटो। रास्ता दो। (चपरासियोंसे) बोरा मत खोलो, योंही नीलाम करो। इससे दाम ज्यादा चढ़ेगा।

पहला चप०—(ठेलेपर खड़ा होकर और हाथमें छड़ी लेकर) ठीक है। देखो लोगो, यह श्रीमान् बण्टाधारजीने माल कुर्क कराया है। मद्यूनके घर भरका माल इसीमें है। टटोल-कर देखो। ठसाठस भरा हुआ है। बोलो नीलामी बोली पचहत्तर रुपये।

लोग—१०)—१५)—२०)—३०)—४०)

पहला चप०—बढ़ो भाई बढ़ो। जाता है चालीस रुपये-पर। (छड़ीसे बोरा पीटता हुआ) एक-दो-एक-दो-बढ़ो। बढ़ो।

लोग—४२)-४४)—अजी ५०)—६०)

पहला चप०—जाता है (उसी तरह पीटता हुआ) एक-दो-एक-दो—

लोग—८०)—९०)—१००)

पहला चप०—एक-दो-तीन। नीलाम खतम; लाओ रुपये।

आदमी—वाह ! वाह ! बण्टाधारजीके सब रुपये वसूल हो गये।

लोग—अरे भाई, ओ खरीदनेवाले जरा बोरा खोलो तो। देखें तो सही कौन कौन माल है।

खरीदनेवाला—अजी हटो। हटो। सब्र करो, दिखलाते हैं।

(बोरा खोला जाता है। बण्टाधारजी उसमेंसे निकलते हैं)

सब—अयं ! यह कौनसा जानवर निकला ?

ख़रीदनेवाला—हाय! मेरे १००) पानीमें पड़ गये। इस जानवरको क्या करूँ? न मांस बिकने लायक और न चमड़ा।

लोग—अरे! यह तो बण्टाधारजी हैं। जिन्होंने 'नवीन पत्रिका' निकाली है।

(महराका आना)

महरा—अब कवन डर? अब तो डिग्रीयाके रुपइया सब वसूल होइगा। अरे? हीयाँ लोग काहे हंसत हैं। बोरा मांसे कवन जनौर निकसा हो?

ख़रीदनेवाला—तुम लोगोंने मिलकर मुझे धोखा दिया। अरे बोल, तुझको लेकर मैं क्या करूँ? कच्चा चबा जाऊँ? कि निगल जाऊँ? क्योंकर दाम सफल करूँ?

महरा—अरे ई तो बण्टाधार होय हो। यही हमरे ऊपर डिग्री कराइस रहा। अरे दादा, बहुत हमका सताइस है। मार भइया मार, जीवके जरन बुझाय ले। तूसे न सपरे तो हमका बुलाय ले।

ख़रीदनेवाला—ठीक है। यह तरकीब दाम वसूल करनेकी है। (मारता है) मेरे रुपये क्या ठीकरोंके थे? बोल धोखेबाज।

महरा—तूसे नाही बनत है। हमका आवेदो। बोलो बहुत सतायो हमका तू। दादा १०) के सौ रुपया कियो। तोहार बोटी बोटी काट डारब जेलखाना होइ जाई तो बलायसे।

ख़रीदनेवाला—अरे तूने इसको धोखा दिया तो दिया मुझको काहेको धोखा दिया ? (दोनों बारी बारीसे मारते हैं)

(गड़बड़का आना)

गड़बड़--हां हां, क्या करते हो ? तुम लोग ख़ाली तमाशा देखना जानते हो। मना नहीं किया जाता ? छि ! क्यों जी चपरासियो ! तुम्हारे मुँह क्या सीये हुए हैं ? तुम लोग सरकारी नौकर और तुम्हारे सामने यह अन्धेर ?

दूसरा चप०—हम लोग क्या बोलें ? हमारी खुद अक़्ल दंग है। न कहते बनता है न चुप रहते बनता है।

(सुखियाका आना)

सुखिया—(अलग) दिलको लाख समझाया ! मगर धड़का लगाही रहा। यही देखने चली आयी कि कहीं भंडा तो नहीं फूटा।

पहला चप०—साहब, असल बात यह हुई कि जो हज़रत बोरेसे निकले हैं इन्हींकी कुर्की लेकर इस महराके मकानपर हम लोग गये। मगर उसके घरमें महरिनके साथ आप मौजूद थे। हम लोगोंको देखकर महरिनने इन्हें बोरेमें छिपा दिया। इनके नौकरने इसी बोरेकी निशान्देही की। हम लोगोंने इसे कुर्क कर लिया।

गड़बड़—शाबाश ! मियाँकी जूती मियांके सर।

बड़े बे आबरू होकर बंधे बोरेसे हम निकले।

सुखिया—(अलग) हाय! जो डर था वही हुआ। भण्डा फूट गया अब क्या करूँ?

महरा—अरे? यूका सुनेन? ई पाजी हमरे घरमां रहा आयं! भइया, न रोको हमका। हमरे खून सवार होइगा। बिना इनकेर अचार निकारे हमार जीयू न मानी।

(बण्टाधारको मारता है। मगर सब लोग छोड़वा देते हैं)

महरा—जाइत• है महरिनियांके तो कच्चे चबाय जाब। मूड़ काट लेब। अरे तू हींये हो भले मिल्यू। रहो छिनार।

(पटककर दांतसे नाक काटता है)

सुखिया—हाय दादा नाक काट लिहीस।

पहला चप०—ओहो! अब तो मादरी ज़बान याद आ गयी।

(गिरते-पड़ते भागती है। महराको पकड़कर पुलिस दूसरी तरफ ले जाती है।)

गड़बड़—"नतीजा कार बदका कार बद है"। एक दिन यही होनेको था और इन बण्टाधारजीको क्या कहूँ? सम्पादकीको लड़कोंका खेल बना रखा है। सम्पादकी क़ौमकी ज़बान है। मुल्कका गुमान है। साहित्यकी शान है। वह ऐसे निकम्मे और बेवकूफ आदमीके हाथमें जिसके आमाल

ऐसे हैं। मुल्क, क़ौम और साहित्यका बस अब ईश्वर ही मालिक है।

लोग—बेशक। अपने फायदेके लिये क़ौम, मुल्क और साहित्यको तबाह करनेवाले, धिक्कार है तुमपर और धिक्कार है तुम्हारे आचरणपर।

गड़बड़—इन्हींपर क्यों ? धिक्कार है हमपर भी जो इनकी चिकनी-चुपड़ी बातोंमें आकर इनकी ल्याकतका खयाल न करके इनपर इतना बड़ा भार सौंपकर बेफिक्र बैठे हैं। धिक्कार है हम अन्धोंपर जो साहित्यकी दुर्दशा, मुल्ककी तबाही कौमकी बदनामी आँखें खोलकर देखनेकी तकलीफ़ नहीं करते। इनके हाथसे इस भारको नहीं छीनते।

(जाता है)

लोग—ठीक है। ठीक है। छीन लो, छीन लो, सम्पादकी इनके हाथसे छीन लो। नहीं तो इस 'नवीन पत्रिका'को एकदम बन्द करा दो। बस, अब हम लोग गुणका परखना सीखेंगे। कूड़ा-करकटके ढेरको दूर फेंकेंगे।

पहला आदमी—'नवीन पत्रिका' वही तो नहीं जिसमें "मरदानी औरत" नामक लेख छपा है।

दूसरा आदमी—उसकी लेखिकाका चित्र भी तो उसमें छपा है।

तीसरा आदमी—हां हां, वही जिसकी समालोचनाएँ हर पत्रमें आजकल निकल रही है कि लेख बड़ा ख़राब है और उसकी लेखिका भी वैसी ही है।

पहला आदमी—लेख ज़रूर ख़राब होगा। ऐसे आदमीकी सम्पादकीमें लेख ख़राब न होंगे तो क्या अच्छे होंगे ?

दूसरा आदमी—पत्र ही खराब है जी। चलो यारो उस लेखिकाको भी देख आवें कि सचमुच वैसी है जैसी समालोचनाओंमें बतलायी गयी है।

सब—हां हाँ, चलो। इसी शहरकी तो है।

(सब जाते हैं)

खरीदनेवाला—चलो, हम भी देख आवें। (बण्टाधारसे) जाओ भाई अपने घर, हम तुम्हें लेकर क्या कोल्हूमें जोतेंगे ?

(जाता है)

दोनों चपरासी—चलो हम लोग भी चलकर तमाशा देखें।

(जाते हैं)

बण्टा०—उस दुष्टने हमारी कलई खोलकर हमारी जड़ ही काट दी। अब क्या करें ? चलो चलते-चलाते ५०) जो उश मान्य ग्राहिकाशे बाकी हैं वशूल कर लावें। तो फिर दूसरा रोज़गार देखें।

(जाता है)

(पर्दा गिरता है)

आठवां दृश्य

दिलजलाका मकान

(दिलजला कई एक अखबार लिये आता है)

दिल०—जबसे 'मरदानी औरत' नामक लेख छपा है, तबसे श्रीमतीजी रोती ही रहती हैं। किसीको मुंह नहीं दिखातीं, और इन कम्बख्तोंने जली-कटी समालोचनाएँ करके जलेपर और नमक छिड़क दिया। ईश्वरकी कृपासे योंही वह बहुत सीधी हो गयी थीं, मगर अब तो बेचारी बिल्कुल गऊ हैं। डरके मारे एक लफ्ज भी जबानसे नहीं निकालतीं। समझती हैं कि ऐसा न हो कि फिर कहीं उस बातको लिखवाकर छपवा दें। अखबारोंसे तो उन्हें अब ऐसी नफ़रत है कि अखबारका नाम सुनते ही जल मरती हैं। जी चाहता है फिर कुछ लिखूँ। अरे कन्हई !

(कन्हईका आना)

कन्हई—हजूर ।

दिल०—श्रीमतीजी क्या कर रही हैं ?

कन्हई—रोटी बनावत हैं !

दिल०—दिन-रात बेचारी रोटी-पानीमें बझी रहती हैं। अच्छा कुर्सी ला। जरा अखबार पढ़ूं।

कन्हई—नाहीं सरकार अखबार न पढ़ो।

दिल०—क्यों ?

कन्हई—अखबारवाले हमरे मलकिनका बदनाम कै दिहिन हैं। और उनके तसबीर छापके देस भरे मां आबरू लैलिहिन। हम अपनी मलकिन साहबके खातिर अख़बारके एक टूक घर मां न रहे देब। और जों कहूं उनके बदनामकरइया बम्भोलानथवा और तसबीर छपइया बण्टाधरवा मिल जाये तो दूनोंकेर हड्डी-पसली तोड़ देब। हम मलकिनसे पूछके दोनोंका नाम याद किये हन।

(सत्यानाशीका आना)

सत्या०—अयं। तुम्हारे हाथमें अख़बार फिर ? क्या तुम मुझे जिन्दा न रहने दोगे ?

दिल०—वाह ! अख़बार क्यों न पढ़ूं ? अब तो मैं भी लेखक होना चाहता हूँ।

सत्या०—नहीं, हाथ जोड़ती हूँ। कहो तो पाँवपर सर रख दूं। नहीं मैं सच कहती हूँ। जहर खाकर जान दे दूँगी। ज्यादे मत शर्माओ।

(बाहर शोर होता है)

दिल०—दरवाजेके बाहर यह शोर कैसा हो रहा है ?

(कन्हईका जाना और आना)

कन्हई—सरकार, झुण्डके झुण्ड आदमी मलकिनके देखेके लिये दुआरेपर ठाढ़ हैं।

सत्या०—हाय ! यह बेइज्जती। ईश्वर मौत दे दे। आज शहरभर मुझपर थूकनेके लिये टूटा पड़ता है। अपना मुंह मैं खुद ही शीशेमें नहीं देख सकती, दूसरोंको कैसे दिखाऊँ ? अरे बम्भोलानाथ, मैंने तेरा क्या बिगाड़ा था जो तूने मुझे कहींका न रखा ?

दिल०—अब तो मुझे भी गुस्सा मालूम हो रहा है। उस कम्बख्तने क्यों ऐसा वाहियात लेख लिखनेकी मुझे सलाह दी थी जिससे मेरी भोलीभाली स्त्रीके दिलपर चोट पहुंची।

कन्हई—हे राम ! कहूं बम्भोलानाथसे मोका भेंट कराय देयो।

सत्या०—अरे बण्टाधार। तूने मुझसे ५०) भी लिये और तुझे ऐसा ही लेख मेरे नामसे छापना था।

दिल०—क्या ५०) यह कब ?

सत्या०—क्या बताऊँ मुझसे ठग ले गया। और ऊपरसे ऐसे लेखके साथ मेरा चित्र छापकर संसारमें उसने मुझे नक्कू बना दिया।

दिल०—५०) हाय ! ५०) ! लूट लिया ! अगर वह कहीं भी दिखायी पड़ा तो बिना मारे छोड़ूंगा नहीं।

कन्हई—अरे सरकार, दूनोंके लिये हम अकेले काफी हन। आप चिन्हायभर देई। (बाहरसे आवाज आती है)

"जरा श्रीमतीजी दर्शन दीजिये। हम लोग बड़ी देरसे खड़े हैं।"

सत्या०—हाय ! एक एक शब्द मेरे कलेजेमें बाणकी तरह लग रहा है। थूको मुझपर जी भरके थूको।

(जमीनपर मूर्च्छित होकर गिरती है)

दिल०—हाय ! हाय ! अरे बण्टाधार और बम्भोलानाथ, तुम दोनोंने मेरी स्त्रीकी जान ली। (उठाकर सहारेके साथ ले जाता है।) चलो कमरेमें लेट रहो।

(दोनोंका जाना)

कन्हई—ए—ए—को घुसा आवत है ?

बण्टा०—(पर्देके भीतरसे) हम हैं हम श्रीमान् बण्टाधारजी।

कन्हई—को ? बण्टाधार ! अच्छा रुको भले मिलेयो।

बम्भोला०—(पर्देके भीतरसे) श्रीमतीजी, हम बम्भोलानाथ लेखक हैं। दर्शनकी अभिलाषासे आये हैं। आज्ञा हो तो आ जायें।

कन्हई—बम्भोलानाथ ? आहाहा ! अरे ! आओ दोस्त। और तूहूँ आओ दोस्त बण्टाधार।

बम्भोला०—(जिधरसे आता है उसी तरफ घूमकर) अरे !

तुम लोग कहां चले आते हो ? हम लेखक हैं। हमारी बात और है। लौटो।

(बाहरसे आवाज आती है)

"अजी श्रीमतीजी किसीसे पर्दा नहीं करतीं। तुम काहेको भांजी मारते हो ?"

बम्भोला०—(उसी तरह) हम तो आज्ञा लेकर आये हैं।

बण्टा०—जाओ, श्रीमतीजीसे कहो कि बण्टाधारजीको ५०) देनेकी जो प्रतिज्ञा की थी वह शीघ्र लाकर दें।

बम्भोला०—और कह देना हमको खाली दर्शन ही दें।

कन्हई—अच्छा रुको, तू एहर खड़ा हो और तू एहर।

(जाकर एक बड़ासा डण्डा लाता है और बीचमें खड़ा होकर दोनोंको मारता है)

बम्भोला०+बण्टा०—अबे यह क्या ? आयँ ?···बापरे बाप !

(बाहरसे आवाज आती है)

"भागो लोगो। सचमुच मरदानी औरत है। एक-एकको भीतर बुलाकर मार रही है। भागो भागो।"

(दिलजलाका डण्डा लेकर आना और बण्टाधारको ठोकना)

दिल०—पचास रुपये लेने आये हो ? देता हूं। लो।

बण्टा०—बापरे बाप ! धत् तेरी किश्मतकी ! जबसे

शाहित्यशेवा शुरू की मार ही खाते बीता। अब शाहित्य शुशरा ऐशी-तैशीमें जाये।

बम्भोला०—यही हाल हमारा भी है। बापरे बाप! अब साहित्यका भूलकर भी नाम न लेंगे।

(कन्हई बम्भोलानाथको एक तरफ मारता हुआ ले जाता है, दूसरी तरफ बण्टाधारको मारता हुआ दिलजला ले जाता है।)

(पर्दा उठता है)

नवां दृश्य

मोहनीका दरबार

गाना

(मदन, मोहनी, मालती, गड़बड़, प्रधानजी, सेठ नाटकचन्द, टिकटकलक्टर, बण्टाधार, सहेलियां इत्यादि)

सहेलियाँ—

आओ सहेलियां करो रंगरलियां गाओ बजाओ दिखाओ अठखेलियां।
कोयल कूके डाली डाली कैसी छाई खुशियाली खिली सारी फुलवारियां।
क्याही सुहावन है मनभावन जिया लुभावन आजका प्यारा यह दिन।
सब मगन हैं प्यारा जशन है तनसे मनसे धनसे दिन ब दिन।
जायें बारियां बलिहारियां नाचो अलबेलियां।

प्रधानजी—अहाहा! आजका दिन भी कैसा सौभाग्यका

है कि आज हमारी कुमारी मोहनी देवी बालिग़ हुईं। और अपनी इस बड़ी रियासतका इन्तज़ाम बमौजिब अपने स्वर्गीय पिताकी वसीयतके खुद करनेके लायक़ हुईं। अब मैं इस भारको कुमारीके हाथमें सौंपकर ज़रा तीर्थोंकी सैर करने जाना चाहता हूँ।

मोहनी—मान्यवर प्रधानजी बेशक मैं बालिग़ हुई। मगर इसलिये नहीं कि आपके हाथसे रियासतका इन्तज़ाम छीन लूँ। क्या ही अच्छा होता कि आप पहलेकी तरह वैसी ही खूबीके साथ अब भी काम करते। वसीयतने रियासतकी जिम्मेदारी मेरे हाथमें दी है। मैं इसको लेती हूं! मगर इसका इन्तज़ाम आपहीके हाथमें देती हूँ।

प्रधान—बड़ी खुशीकी बात है कि आपने इस बूढ़ेका ख़याल रखा।

मालती—ऐसी खुशियालीके वक्त मैं कुमारीजीकी शादीके बारेमें वसीयतकी शर्त जानना चाहती हूं।

प्रधान—हां, यही एक काम रह गया है जो कुमारीजीके शादीसे लगातार इनकार करनेकी वजहसे मैं नहीं कर सका। गोकि वरका चुनना अब मेरे हाथमें नहीं रहा, तो भी इसको पाबन्दी बिल्कुल दूर नहीं हुई। क्योंकि कुमारीजीकी शादी सिर्फ उस भाग्यवान्से हो सकती है जो कमसे कम

लखपती हो।

मदन—(अलग) लो उम्मीदो ! सुनो। अरमानो ! सुनो। मैं गलियोंका भिस्तभंगा कभी स्वप्नमें भी नहीं लखपती हो सकता। हाय !

मालती—(कुछ सोचकर) क्यों जनाब, आखिर यह बेतुकी शर्त क्यों रखी गयी ?

प्रधान—इसलिये कि दूल्हा इज्जतवाला और लायक मिले। क्योंकि रुपयेसे इज्जत है। रुपयेसे ल्याकत है।

मालती—अगर कोई आदमी ऐसा हो जो बिना रुपयेके लायक हो और उसका नाम दुनियामें लखपती क्या करोड़-पतिसे भी ज्यादा फैला हो तो वह वसीयतके मुताबिक इज्जत-वाला और लायक है या नहीं ?

गड़बड़—हां, जनाब बोलिये ! बोलिये।

प्रधान—नहीं, कभी नहीं। (मोहनी, मालती, मदन और गड़बड़का रंजीदा होना)

मालती—आप तो वसीयतके लफ्जोंकी तरफ जाते हैं, उसके असली मतलबपर नहीं ध्यान देते।

गड़बड़—बेशक।

सेठ—बहुत दुरुस्त।

प्रधान—मजबूरी है। मैं क्या करूं ?

मदन—(अलग) हाय !

मोहनी—देख सखी, इस विषयको अब यहीं समाप्त कर। क्योंकि मैं शादीके झगड़ेसे दूर रहूंगी। शादी नहीं करूंगी।

मदन—(अलग) उफ़ !

मालती—मालूम होता है कि मदन अपने खोये हुए नाटकके बारेमें पूरा हाल जाननेके लिये बड़े बेचैन हैं।

मोहनी—क्यों नहीं, लेखकोंको केवल अपनी रचना ही प्यारी होती है।

मदन—नहीं, बल्कि इनसे ज्यादे वह जिनपर उनकी रचनाओंका सहारा होता है। जिनके बल वह खड़ी होती हैं।

मालती—हाँ, हमलोग भी उस नाटकके बारेमें सुनना चाहते हैं। क्योंकि हम सब सिर्फ इतना ही जानते हैं कि वह नाटक हमारी सखीको सड़कपर गिरा हुआ मिला, उन्होंने सेठ नाटकचन्द मालिक थियेट्रिकल कम्पनीके पास भेज दिया, बस।

सेठ—उसी नाटकके बारेमें ख़ुशख़बरी सुनाने आया हूं। उस नाटकने ऐसी क़दर पायी है कि उसकी बदौलत कम्पनीकी इज्जत बे इन्तहा बढ़ गयी। कम्पनीने लाखों रुपये उससे पैदा किये। मदनका हिसा मुनाफ़े में एक लाख रुपये हो चुके हैं जिसको कम्पनी निहायत शुक्रियाके साथ मदनको देती है।

मालती+गड़बड़—धन्य ईश्वर ! धन्य है तू !

मदन—अयँ ! क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ ?

सेठ—(मदनके हाथमें चेक और नोट देता हुआ) इतनाही नहीं बल्कि एक लाख रुपये इसका विलायती पुरस्कार और लीजिये जिसके लिये कम्पनीने अपनी शानदुबाला करनेकी खातिर इसका अनुवाद कराकर भेजा था और ईश्वरकी कृपासे उसने वहां भी बाज़ी मारी और आज ही इसका चेक आपके नामका कम्पनीकी मारफ़त आया है।

मदन—या ईश्वर ! यह क्या सुनता हूं ! मैं होशमें हूं या बिल्कुल दिवाना हो गया हूं।

मदनको छोड़कर सब०—धन्य हैं देशके सपूत ! आप धन्य हैं ! मातृभूमि आज आपपर फूली नहीं समाती।

मदन—यह आदर यह रुपये मेरे नहीं बल्कि मेरी पूजनीया देवी मेरी हृदयकी रानी मोहनीके हैं। क्योंकि तुम्हींने मेरे ये भाव उभारे थे। तुम्हारी ही धुनमें मैंने यह नाटक लिखा था। इसलिये इन रुपयोंको देवी, तुम्हारे ही चरणोंपर चढ़ाता हूँ।

(मोहनीके पैरके पास रखता है)

मालती—इस समय मोहनीकी इच्छा अभिलाषा भाव और जबान मैं हूँ। मैं इन रुपयोंको तुम्हें वापस करती हूँ।

और वसीयतकी पूरी पाबन्दी करती हुई इनके सूदमें तुम्हें मैं अपनी प्यारी सखी मोहनीको देती हूं। (मोहनीका हाथ मदनके हाथमें देती है) दुनिया मोहनीकी योग्यता नहीं जानती। साहित्य-सेवियोंमें इस समय अगर कोई मदनके जोड़की है तो मेरी मोहनी। जब ऐसे दो साहित्य-सेवियोंका सम्बन्ध होगा तो हमारा साहित्य दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करेगा।

मदन और मोहनीको छोड़कर सबने—बेशक। बिल्कुल सही है।

मदन—मारे खुशीके मेरे हवास ठिकाने नहीं हैं। मैं आपेसे बाहर हो रहा हूं। कहां मैं और कहां मोहनी और उसपर इतनी दौलत और नाम! ईश्वर यह सब तेरे करिश्में हैं।

मालती—तुलसीदासजीके वचन कहीं झूठे हो सकते हैं—

"जेहिके जेहिपर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलहि न कछु सन्देहू।"

गड़बड़—ईश्वर ऐसा दिन सबको दिखावे।

(दौलतरायका आना)

दौलत०—बेटा! बेटा! बेटा! मदन! सुना तुमने बहुतसा रुपया कमाया है।

मदन—सब आपके आशीर्वादकी बदौलत पिताजी। लीजिये, इसमेंसे एक लाख रुपये देकर यह आवारा लड़का आपकी उम्मीदें पूरी करता है।

दौलत०—वाह ! वाह ! बड़ा लायक लड़का है। मैं पहले ही जानता था।

मदन०—और एक लाख रुपये मैं गड़बड़को देता हूं कि वह अच्छे-अच्छे पुराने और नये साहित्यके रत्न ढूंढ़कर प्रकाशित करें और योग्य लेखकोंको यथोचित आदर सम्मान और पुरस्कार देकर साहित्यकी दिनोंदिन उन्नति करायें। इसके लिये गड़बड़से बढ़कर दूसरा आदमी मुझे दिखायी नहीं देता।

दौलतराय, मोहनी, मदनको छोड़कर सब०—वाह ! वाह ! साहित्यके सच्चे सपूत तुम जुग जुग जीयो।

दौलत०—नहीं नहीं हर्गिज नहीं। बड़ा नालायक लड़का है। यह मैं पहले ही कहता था।

मदन—पिताजी, यह दौलत मुझको साहित्य सेवामें मिली है, इसलिये सच पूछिये तो इसे कुल साहित्य-सेवाहीमें लगा देना चाहिये। मैं तो इसके लिये सिर्फ आधा ही खर्च कर रहा हूं।

दौलत०—पागल हो गया है क्या ?

मदत—और अब मैं अपनी लेखनीके बलपर मोहनीके साथ अनुभव और ज्ञान प्राप्त करनेके लिये दुनियाकी सैर करूंगा ताकि मैं साहित्यकी सेवा यथोचित रूपसे कर सकूँ।

दौलत०—लो और सुनो। दौलत भी गँवायी और अब जात भी गँवानेकी फिक्र कर रहा है। अरे! अन्धे! यह क्या गजब करता है? अपने खान्दानका नाम क्यों मिटा रहा है? अपना रिश्ता तुझसे छुड़ानेके लिये मुझे क्यों मजबूर कर रहा है?

मदन—'सुनो हो विटप हम पुहुप तिहारे अहैं,
राखिहौं हमैं तो शोभा रावरी बढ़ावेंगे।
तजि हौ हरषि कै तो बिलग न मानैं कछू,
जहां जहां जैहैं तहां दूनों जस गावेंगे।
सुरन चढ़ैंगे नर सिरनि चढ़ैंगे नित,
सुकवि "अनीस" हाथ हाथ बिकावेंगे।
देसमें रहेंगे परदेसमें रहेंगे,
काहू भेषमें रहेंगे तऊ रावरे कहावेंगे।"

दौलत०—बस बस चुप रह। मैं तेरे साथ अपना धर्म देना नहीं चाहता। ऐसे नालायक लड़केका मेरे लिये मुंह देखना भी पाप है।

(जाता है)

सेठ—अफ़सोस! जब ऐसे खयालातके बुजुर्ग यहां मौजूद हैं तब मुल्कमें तरक्की खाक हो?

गड़बड़—ऐसी खुशियालीके वक्त इन बातोंका खयाल

छोड़िये। क्यों मालती, क्या तुम्हारे बापने भी कोई वसीयत की है?

मालती—जी हां, की है।

गड़बड़—(मोछ ऐंठकर) क्या? क्या? जल्दी कहो। क्योंकि अब मैं भी लखपती कहा जा सकता हूँ।

मालती—वह यह कि मेरी शादी किसी रुपयेवालेके साथ नहीं बल्कि किसी गरीबके साथ होवे जिसके पास टका न हो। क्योंकि जिनके पास रुपये होते हैं वह अपनी शानके आगे अपनी स्त्रीकी कुछ परवाह नहीं करते। और सैकड़ों तरहके ऐब करते फिरते हैं।

गड़बड़—लो, यह तो सब गड़बड़ हो गया। जनाब, अपने सब रुपये वापस लीजिये। मैं गरीब ही भला।

मदन—तुम इतने बड़े ज्ञानी होकर यह भी न समझ सके कि मालती तुम्हारी मुहब्बतको आजमाती है। देखती है कि तुम रुपयेको ज्यादे प्यार करते हो या उसको। मैं मोहनीकी इच्छासे उनकी सखी मालतीको तुम्हें सौंपता हूं।

(गड़बड़के हाथमें मालतीका हाथ देता है। इसके बाद बम्भोलानाथ आता है)

बम्भोला०—(प्रधानजीसे) माफ कीजियेगा, आपका निमन्त्रण देरको मिला था इसलिये देर करके आना मुनासिब समझा।

प्रधान—ख़ैर आप आ तो गये।

गड़बड़—और अच्छे वक्तपर आये। क्योंकि अपने छापेखानेकी प्रूफरीडरीका काम आपहीको देनेके लिये सोच रहा था और बण्टाधारको बेलन चलानेका।

टिकट०—बहुत दुरुस्त। है भी यह बेलननुमा।

(दिलजला और सत्यानाशीका आना)

प्रधान—वाह ! जनाब वाह ! आपने बेशक बड़ी जल्दी की।

दिलजला—क्या करता ? मेरी श्रीमतीजी घरसे बाहर निकलनेके लिये किसी सूरतसे राजी ही नहीं होती थीं। इसीमें देर हो गयी। माफी चाहता हूं। (गड़बड़से) अख्खखा ! आप भी यहीं है लेखक बम्भोलानाथ ?

बम्भोला०—अजी मैं यह हूँ यह।

गड़बड़—जी हां, अगर सलाम बन्दगी करना हो तो मैं हूं बम्भोलानाथ। और मारना-पीटना हो तो वह हैं।

मालती—कौन श्रीमती सत्यानाशी देवी !

बम्भोला०—क्या वही मरदानी औरत जो घरमें बुलवाकर पिटवाती थी ?

मालती—आज आपके चेहरेपर घूँघट ? यह अनोखी बात क्यों ?

सत्या०—क्योंकि स्त्रियोंकी लज्जा ही असली जेवर है।

बम्भोला०—(अलग) अरे! यह तो मरदानीसे बिल्कुल जनानी निकल गयी। लुटिया डूबो दी।

मोहनी—बलिहारी है! आपके मुँहसे यह सुनती हूं। मगर स्त्रियोंके लिये आँखोंमें लज्जा घूंघटसे हजार गुनी अच्छी है।

सब मर्द—बेशक, हजार गुनी अच्छी है। धन्य हो तुम देवियो! जो इतनी पढ़ी लिखी होकर भी तुम्हारे दिलमें यह ख़याल अभी बाकी है।

सत्या०—और ईश्वर करे यह ख़याल हम लोगोंमें हमेशा बना रहे।

सब मर्द—हे परमात्मा, ऐसा ही हो। अब तुम्हारा नाम सत्यानाशी नहीं बल्कि आजसे शोभाराशी हुआ। और देवियो! तुम सभोंसे हमारी एक आखिरी विनती है। उसे सुन लो। तुम्हारे लिये वही हमारी नसीहत है। वही हमारी वसीयत है।

गाना

सब मर्द०—

"रविशेखामपर मर्दोंके न जाना हर्गिज़,
दाग़ तालीममें अपनी न लगाना हर्गिज़।
नाम रखा है नुमाइशका तरक्की वो रिफार्म
तुम इस अन्दाजके धोखेमें न आना हर्गिज़।

नकल योरोपकी मुनासिब है मगर याद रहे,
ख़ाकमें ग़ैरते क़ौमी न मिलाना हर्गिज़।
रुख़से पर्दे को हटाया तो बहुत ख़ूब किया,
परदये शर्मको दिलसे न भुलाना हर्गिज़।
तुमको कुदरतने जो बख़शा है हयाका जेवर,
मोल इसका नहीं कारूँका खज़ाना हर्गिज़।
अपने बच्चोंकी ख़बर क़ौमके मर्दोंको नहीं,
यह हैं मासूम इन्हें भूल न जाना हर्गिज़।
इनकी तालीमका मकतब है तुम्हारा जानूं,
पास मर्दोंके नहीं इनका ठिकाना हर्गिज़।
परवरिश क़ौमकी दामनमें तुम्हारे होगी,
याद इस फ़र्ज़की दिलसे न भुलाना हर्गिज़।
हम तुम्हें भूल गये इसकी सज़ा पाते हैं,
तुम ज़रा अपने तईं भूल न जाना हर्गिज।

"चक्ररथ"

(पर्देका धीरे-धीरे गिरना और तमाशेका ख़तम होना)

❀ समाप्त ❀

For Staging and Filming rights please apply
Srijut G. P. Srivastava B. A., LL. B. Gonda.